इससे तात्पर्य किसी उद्दीपन चिन्ह द्वारा अनुक्रिया उत्पन्न करने की प्रवृत्ति से होता है। इस अभिगृहीत में हल ने यह स्पष्ट किया है कि आदत शक्ति का निर्माण पुनर्वलित प्रयासों की संख्या पर निर्भर करता है। इसके अलावा इसका निर्माण अन्य कई चरों की शक्ति, पुनर्वलन तथा अनुक्रिया के बीच विलम्ब तथा उद्दीपन एवं अनुक्रिया के बीच समय अन्तराल आदि पर भी निर्भर करता है।

(4) पाँचवां अभिगृहीत का सम्बन्ध प्राथमिक प्रणोद से है। प्राथमिक प्रणोद भी एक तरह का मध्यवर्त्ती चर है जिसे हल के सिद्धान्त में अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। प्रणोद से तात्पर्य प्राणी की एक ऐसी क्षणिक अवस्था से होता है जो उन चीजों के बवन से उत्पन्न होता है जिसकी जरूरत शरीर को होती है या फिर दर्दपूर्ण उत्तेजन से उत्पन्न होती है। इसके तीन विशिष्ट कार्य होते हैं–

(क) प्रणोद प्राथमिक पुनर्बलन को अधिक प्रभावी बना देता है क्योंकि पुनर्वलन से प्रणोद में तेजी से कमी आती है।

(ख) प्रणोत से अनुक्रिया उत्पन्न होती है क्योंकि यह आदत शक्ति को प्रतिक्रिया अन्त:शक्ति में परिवर्त्तित करता है ।

(ग) कुछ प्रणोद से क्रिया आदत का निर्माण होता है। इसका मतलब यह हुआ कि अन्तोंद विभिन्न आन्तरिक उद्दीपनों के बीच विशिष्टता भी उत्पन्न करता है।

5. छठा एवं सातवाँ अभिगृहीत भी सीखने की व्याख्या के लिए महत्वपूर्ण अवस्थाओं का वर्णन करता है। छठा अभिगृहीत का सम्बन्ध उद्दीपन तीव्रता जिसका संकेत है, की व्याख्या से है तथा सातवाँ अभिगृहीत का सम्बन्ध प्रोत्साहन अभिप्रेरण से है जिसका संकेत है।

6. आठवाँ अभिगृहीत का सम्बन्ध एक और भी महत्वपूर्ण संप्रत्यय अर्थात् प्रतिक्रया अन्त:शक्ति जिसका संकेत है, से है। प्रतिक्रिया अन्त:शक्ति से तात्पर्य दिये हुए उद्दीपन के प्रति किसी विशेष अनुक्रिया करने की प्रवृत्ति से होता है।

7. नौवाँ अभिगृहीत का सम्बन्ध अवरोध एवं अवरोधात्मक अन्त:शक्ति से होता है। हल ने अवरोध को दो भागों में बाँटा है–प्रतिक्रिया अवरोध तथा अनुबन्धित अवरोध। प्रतिक्रियात्मक अवरोध से तात्पर्य उस अनुक्रिया को न दोहराने की प्रवृत्ति से होता है जिसे प्राणी ने अभी किया है। अत: यह एक तरह का नकारात्मक प्रणोद है।

8. ऊपर के आठ अभिगृहीतों द्वारा सीखने के सिद्धान्त के बारे में पर्याप्त सूचना मिल जाती है। बाकी 9 अभिगृहीतों का सम्बन्ध सीखने से संबंधित अन्य घटनाओं से है। जैसे–अभिगृहीत संख्या 10 का सम्बन्ध उद्दीपन सामान्यीकरण की व्याख्या करने से है। अभिगृहीत संख्या 11 का सम्बन्ध उद्दीपन अन्त:क्रिया से, 12 का सम्बन्ध व्यवहारात्मक दोलन से, 13 का प्रतिक्रिया दहेली से सम्बन्धित प्रतिक्रिया अन्त:शक्ति से, 15 का प्रतिक्रिया अन्त:क्रिया अन्त:शक्ति का सम्बन्ध प्रतिक्रिया विस्तार से दिखलाने से तथा 15 का प्रतिक्रिया अन्त:शक्ति का समबन्ध विलोपन से है एवं 17वाँ अभिगृहीत का सम्बन्ध वैयक्तिक विभिन्नता के अध्ययन से है।

हल द्वारा प्रस्तावित तथ्यों एवं सिद्धान्तों की अलोचना कई मनोवैज्ञानिकों द्वारा की गयी है। इनमें से कुछ प्रमुख अलोचनाएँ निम्नांकित हैं–

1. अलोचकों का मत है कि हल ने मनोविज्ञान के मुख्य बिन्दुओं की व्याख्या करने में गणितीय सूत्रों का जरूरत से ज्यादा उपयोग किया है। उनकी राय यह है कि हल द्वारा दी गयी व्याख्या जटिल एवं गणितीय होने के कारण समझने योग्य नहीं है। आलोचकों का मत है कि इन संप्रत्ययों का त्याग करके भी हल द्वारा प्रस्तावित संप्रत्ययों की व्याख्या सम्भव थी।

2. आलोचकों का मत है कि हल ने अपने आपको एक तरफ तो व्यवहारवादी बतलाया परन्तु दूसरी तरफ वे मध्यवर्त्ती चरों तथा प्राणी की अनुमानित अवस्थाओं की ओर काफी झुकाव दिखाया। इसका मतलब यह हुआ कि वे एक द्वैतवादी स्थिति का समर्थन करते थे। मध्यवर्त्ती चरों एवं अनुमानित अवस्थाओं की ओर हल के झुकाव की आलोचना इसलिए की गयी है क्योंकि वे वस्तुनिष्ठ रूप से प्रेक्षणीय नहीं हैं।

3. हल द्वारा प्रस्तावित मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त यद्यपि काफी तार्किक है, फिर भी उसमें तार्किकता संबंधी कई तरह के दोष हैं। कोच (1959) ने अपने अध्ययन में यह पाया है कि हल द्वारा प्रस्तावित मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त में कई तरह की तार्किक कठिनाइयाँ हैं जिनके कारण किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन हो जाता है।

4. यह भी कहा जाता है कि हल ने अपने नियमों एवं सिद्धान्तों को सभी तरह के स्तनपायी प्राणियों पर लागू करना चाहा लेकिन उन्होंने ऐसा करने के लिए सम्भावित डिजाइनों एवं तथ्यों को नजरअन्दाज किया। उन्होंने अपना प्रयोग मूलत: उजले चूहों तक सीमित रखा तथा मनुष्यों पर उन्होंने काफी कम प्रयोग किया। ऐसी परिस्थिति में हल द्वारा अपने परिणामों को सभी तरह के स्तनपायियों पर लागू करना मात्र एक वैज्ञानिक मखौल ही माना जा सकता है।

इन अलोचनाओं के बावजूद हल के मनोविज्ञान का स्वरूप कुछ ऐसा था कि उससे सीखने के मनोविज्ञान का क्षितिज काफी विस्तृत एवं वैज्ञानिक हो पाया है। इसके लिए इस क्षेत्र के बाद के मनोवैज्ञानिकों ने उसके प्रति काफी आभार व्यक्त किया हैं।

2.5.3 उत्तरकालीन व्यवहारवाद में बी0 एफ0 स्कीनर का योगदान (Contributions of Skiner)

स्कीनर अपनी मनोवैज्ञानकि पद्धतियों एवं सिद्धान्तों की व्याख्या करने में वाटसन के बहुत करीब हैं, परन्तु हल के विपरीत हैं। वाटसन के समान उन्होंने किसी खास तरह की अनुक्रिया जैसे–लिभर दबाने की अनुक्रिया या चोंच मारने की अनुक्रिया का अध्ययन नियंत्रित परिस्थिति में गहन रूप से किया। इसके बाद कुछ चयनित स्वतंत्र चरों में जोड़-तोड़ करके आश्रित चर पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया। अन्त में, उन्होंने स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर के बीच के कार्यात्मक सम्बन्ध पर बल डाला। अपने पूरे मनोविज्ञान के दौरान स्कीनर का दृष्टिकोण वर्णनात्मक था। शायद यही कारण है कि उनके व्यवहारवाद को वर्णनात्मक व्यवहारवाद कहा गया।

स्कीनर के प्रमुख योगदानों को निम्नलिखित आठ प्रमुख भागों में बांटकर अध्ययन किया जा सकता है–

1. अनुबन्धन का मनोविज्ञान–स्कीनर ने जिस अनुबन्धन का समर्थन किया है, उसे साधनात्मक अनुबन्धन या क्रियाप्रसूत अनुबन्धन कहा गया है। स्कीनर ने अनुक्रिया को दो भागों में बाँटा है–प्रतिवादी अनुक्रिया तथा क्रियाप्रसूत अनुक्रिया। प्रतिवादी अनुक्रिया वैसी अनुक्रिया को कहा जाता है जो किसी दिये गए उद्दीपन द्वारा उत्पन्न होती है।

स्कीनर के क्रियाप्रसूत अनुबन्धन का एक मुख्य भाग पुनर्बलन अनुसूची है। पुनर्बलन अनुसूची से तात्पर्य एक ऐसे पुनर्बलन पैटर्न से होता है जिसे प्रयोगकर्त्ता प्राणी (या प्रयोज्य) को प्रयोग की परिस्थिति में अनुक्रिया करने के बाद देता है। पुनर्बलन अनुसूची दो प्रकार की होती हैं–सतत पुनर्बलन तथा आंशिक पुनर्बलन। सतत पुनर्बलन वैसे पैटर्न को कहा जाता है जिसमें पुनर्बलन प्रत्येक सही अनुक्रिया करने के बाद प्राणी को दिया जाता है। इसका उपयोग प्राय: प्रयोग की प्रारंभिक अवस्था में किया जाता है। आंशिक पुनर्बलन से तात्पर्य वैसे पैटर्न से होता है जिसमें कुछ सही अनुक्रिया के बाद पुलर्बलन दिया जाता है परन्तु कुछ अन्य सही अनुक्रिया के बाद पुलर्बलन नहीं दिया जाता है।

पैवलव के समान स्कीनर ने भी सीखने से सम्बन्धित अन्य घटनाओं जैसे–गौण पुनर्बलन, विलोपन, विभेद तथा विरुचि अनुबन्धन आदि पर भी प्रकाश डाला है। इनसे इनके योगदानों की रुचि न केवल लम्बी बल्कि प्रशंसनीय भी हो जाती है।

2. प्रणोद–स्कीनर निश्चित रूप से एक व्यवहारवादी थे। अत: उन्होंने प्रणोद की व्याख्या हल के समान कोई अनुमानित अवस्था या मध्यवर्त्ती चरों के रूप में नहीं किये हैं। उन्होंने प्रणोद की व्याख्या भोजन, पानी आदि के वचन के रूप में या पशु के सामान्य शरीर वजन के प्रतिशत के रूप में किये हैं। इन दोनों ही हालतों में प्रणोत का मापन एक प्रेक्षणीय व्यवहार के रूप में किया जाता है जिसे स्पष्टत: मापा जा सकता है।

3. संवेग–प्रणोद के समान संवेग की भी व्याख्या स्कीनर द्वारा एक वस्तुनिष्ठ ढंग से की गयी है। उन्होंने सांवेगिक व्यवहार की उस परिस्थिति के संदर्भ में व्याख्या करने की कोशिश की है जो किसी अनुक्रिया के होने की संभावना को प्रभावित करता है।

4. शेपिंग एवं अन्धविश्वासी व्यवहार–सामान्यत: जो लोग स्कीनर को नापसंद करते हैं। उनका कहना है कि स्कीनर द्वारा सीखने की जो व्याख्या प्रदान की गयी है, वह साधारण सीखना या स्कीनर बक्स में जटिल अनुक्रिया करने के लिए भी सिखाया जा सकता है। यह जिस प्रविधि द्वारा सम्भव हो पाता है, उसे शेपिंग कहा जाता है। इस प्रविधि में पशु में व्यवहार को धीरे-धीरे आनुक्रमिक उपगमन के द्वारा जिसमें पुनर्बलन के आधार पर अनुक्रिया को एक खास दिशा में मोड़ा जाता है, संपन्न किया जाता है।

स्कीनर ने अंधविश्वासी व्यवहार का भी अध्ययन किया है। उन्होंने इस तरह के व्यवहार को स्कीनर बक्स में चूहों द्वारा दिखलाते पाया है। इस तरह का व्यवहार आकस्मिक पुनर्बलन के कारण विकसित होता है।

स्कीनर ने यह भी स्पष्ट किया है कि भाषा के दो मुख्य कार्य होते हैं–माण्ड कार्य तथा टैक्ट कार्य। माण्ड कार्य से तात्पर्य वैसे कार्य से होता है जिसमें यह पता चल जाता है कि कुछ मांगा जा रहा है। जब उस मांग की पूर्ति हो जाती है तो बोले गए शब्द पुनर्बलित हो जाते हैं और फिर एक आवश्यकता की उत्पत्ति होती है और व्यक्ति फिर उस मात्रा को दोहराता है। टैक्ट कार्य से तात्पर्य वैसे कार्य से होता है जहाँ शिशु वातावरण की किसी वस्तु का नाम बतलाता है।

5. शिक्षण मशीन तथा कार्यक्रमिक सीखना–स्कीनर द्वारा बतलाये गए सिद्धान्तों एवं नियमों का शिक्षा में काफी उपयोग हुआ है। शिक्षण मशीन द्वारा कार्यक्रमित सीखना एक ऐसे ही उपयोग का उदाहरण है। कार्यक्रमित सीखना में व्यक्ति किसी पाठ या कार्य को एक कार्यक्रम या विशेष निर्देश देकर उसे छोटे-छोटे अंशों में बांटकर सीखता है। स्कीनर का अपना मत यह था कि पौराणिक वर्ग शिक्षण की जो विधि है, वह कई कारणों से काफी दोषपूर्ण है। जैसे, वर्ग में प्रत्येक छात्र को वांछित अनुक्रिया करने का पर्याप्त मौका नहीं मिल पाता है तथा सीखने के लिए दर भी सभी छात्रों में एक समान ढंग की नहीं होती है। इसके अलावा इसमें पुनर्बलन हमेशा विलम्बित होता है। इन सभी कठिनाइयों से छुटकारा पाने के लिए स्कीन ने कार्यक्रमित सीखना जो शिक्षण मशीन द्वारा किया जाता है, को महत्त्वपूर्ण ठहराया।

6. व्यवहार परिमार्जन–व्यवहार परिमार्जन या जिसे व्यवहार चिकित्सा भी कहा जाता है, में व्यक्ति के अवांछित व्यवहार को शेपिंग, धनात्मक पुनर्बलन का चयनात्मक प्रयोग तथा विलोपन के माध्यम से परिवर्त्तन करके उसकी जगह पर वांछित व्यवहार को स्थापित किया जाता है। स्कीनर के सिद्धान्तों पर आधारित व्यवहार चिकित्सा की प्रविधियाँ विभिन्न तरह की व्यवहारात्मक समस्याओं को दूर करने के लिए सफलतापूर्वक उपयोग किया गया है। व्यवहार समस्या का चाहे जो भी रूप क्यों न हों, स्कीनर की प्रविधि में पहले उस व्यवहार समस्या के प्रत्येक पहलू को स्पष्ट रूप से परिभाषित कर लिया जाता है। इसके बाद इस व्यवहार को करने के बाद मिलने वाले पुनर्बलन को हटा दिया जाता है तथा वांछित व्यवहार को पुनर्बलित किया जाता है। ऐसा करने

से धीरे-धीरे व्यक्ति मे वांछित अनुक्रिया स्थापित हो जाती है तथा अवांछित अनुक्रिया को व्यक्ति त्याग कर देता है। स्कीनर द्वारा प्रतिपादित व्यवहार परिमार्जन की विभिन्न प्रविधियों का संयुक्त नाम "प्रासंगिकता प्रबन्धन" है।

8. वियोन्ड फ्रीडम एण्ड डिगनिटी–स्कीनर (1971) ने एक पुस्तक प्रकाशित की जिसका नाम था, "वियोन्ड फ्रीडम एण्ड डिगनिटी"। इस पुस्तक में उन्होंने एक ऐसे सामाजिक दर्शनशास्त्र का प्रतिपादन किया है जिसमें उन्होंने प्रयोगशाला से अलग हटकर विभिन्न सामाजिक समस्याओं के अध्ययन की ओर अपनी अभिरुचि का परिचय दिया है। उन्होंने यह स्पष्ट रूप से बतलाया है कि मानवीय समस्याओं के प्रभावी समाधान के लिए व्यक्ति को व्यवहार की तकनीकी का उपयोग करना चाहिए।

स्कीनर के योगदान मनोविज्ञान के लिए काफी महत्वपूर्ण है। फिर भी आलोचकों ने उन्हें अछूता नहीं छोड़ा है। प्रमुख आलोचनाएँ निम्नांकित चार हैं–

(1) स्कीनर के मनोविज्ञान की सबसे अधिक मशहूर आलोचना यह है कि स्कीनर ने कुछ सीमित व्यवहारों का अध्ययन किया है। जैसे, उन्होंने अपने आपको चूहों द्वारा लीभर दबाने तथा कबूतरों द्वारा चोंच मारने की अनुक्रिया के अध्ययन तक सीमित रखा है। प्राणी के इन सरल व्यवहारों का अध्ययन करके उन्होंने एक विदित सामान्यीकरण किये हैं जिसे आलोचकों ने स्कीनर का अतिसरलीकरण कार्यक्रम बतलाया है। कुछ आलोचकों जैसे, कैन्टोर (1970) ने यह स्पष्ट किया है कि स्कीनर ने एक संप्रदाय में प्राणी के अन्य व्यवहारों जैसे–चिन्तन, सर्जनात्मकता, समस्या समाधान, तर्कणा आदि के अध्ययन का कोई प्रयास नहीं किया गया है जिसे एक महत्वपूर्ण लुप्ति माना जा सकता है।

(2) कुछ आलोचकों का मत है कि स्कीनर ने अपने मनोविज्ञान में प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के वर्णनात्मक प्रेक्षण पर जरूरत से ज्यादा बल डाला है तथा उसके सैद्धान्तिक पहलू की उपेक्षा की है। आलोचकों का मत है कि उन्होंने सचमुच में किसी सिद्धान्त की जरूरत नहीं महसूस की जो पर्याप्त व्याख्या प्रदान कर सके।

(3) कुछ आलोचकों का मत है कि स्कीनर द्वारा प्रतिपादित रिक्त प्राणी का संप्रत्यय सही नहीं है और न ही उनका यह निवदेन ही। आलोचकों के अनुसार स्कीनर ने जानबूझकर प्राणी या दैहिक नियमों के सन्दर्भ से बचने का प्रयास किया है। इन आलोचकों का मत है कि स्वयं प्राणी या उसकी दैहिक क्रियाओं की उपेक्षा करके व्यक्ति के मनोविज्ञान के बारे में एक सही तस्वीर नहीं उपस्थित की जा सकती है।

(4) चौमस्की (1959) ने शाब्दिक व्यवहार के अपर्याप्त विश्लेषण तथा संस्कृति के अध्ययन के लिये स्कीनर के प्रस्तावित डिजाइन की आलोचना की है। उन्होंने कई मुद्दों पर स्कीनर के विश्लेषण की आलोचना किये हैं।

इन आलोचकों के बावजूद स्कीनर एक ऐसे व्यवहारवादी हैं जिनका समानान्तर ढूँढ़ना मनोवैज्ञानिकों के लिए एक कठिन कार्य है। मनोविज्ञान के क्षेत्र में उनके द्वारा किए गए योगदानों में स्कीनर बक्स, पुनर्बलन अनुसूची तथा कार्यक्रमित सीखना विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

2.5.4 टॉलमैन का सोद्देश्य व्यवहारवाद (Tolman's Purposive Behaviourism) :

टॉलमैन के लिए व्यवहार एक लक्ष्य-निदेशित या सोद्देश्य होता है। शायद यही कारण है कि अपने व्यवहारवादी मनोविज्ञान को "एक वस्तुनिष्ठ व्यवहारवादी सोद्देश्यवाद कहा है।"

मनोविज्ञान के क्षेत्र में टॉलमैन द्वारा किए गए योगदानों को निम्नांकित चार प्रमुख भागों में बांटकर वर्णन किया जा सकता है–

1. स्वतंत्र चर–टॉलमैन कुछ ऐसे स्वतंत्र चरों की पहचान की हैं जिनसे व्यवहार प्रभावित होता है। इन चरों को प्रयोगकर्त्ता द्वारा मापा जाता है तथा उसमें जोड़-तोड़ भी की जाती है। आरंभ में उन्होंने पाँच ऐसे चरों की पहचान की तथा प्राणी का व्यवहार उन पाँचों चरों द्वारा प्रभावित होता पाया गया. है। सूत्र के रूप में इसे इस तरह कहा गया–

यहाँ,

व्यवहार

पर्यावरणी उद्दीपन

दैहिक प्रणोद

आनुवंशिकता

गत प्रशिक्षण

उम्र

2. आश्रित चर–टॉलमैन ने आश्रित चर को वैसे व्यवहारों के रूप में परिभाषित किया है जिसे प्रेक्षण किया जा सकना संभव हो पाता है। उनके लिए प्राणी का व्यवहार निष्क्रिय नहीं बल्कि सक्रिय तथा चयनात्मक होता है। इस तरह से ऑलमैन का प्रेक्षण यह था कि भूलभुलैया में चूहा उद्दीपन को निष्क्रिय रूप में प्रत्यक्षण नहीं करता है बल्कि सार्थक उद्दीपनों को सक्रिय होकर चयन कर लेता है। उन्होंने प्रेक्षणीय व्यवहार को उद्दीपन अनुक्रिया सम्बन्ध के रूप में न कि यांत्रिकीय उद्दीपन अनुक्रिया सम्बन्ध जैसा कि वाटसन, हल आदि ने कहा था, के रूप में स्वीकार किये हैं।

3. मध्यवर्त्ती चर–टॉलमैन प्रथम ऐसे मनोवैज्ञानिक हैं जिन्होंने मनोविज्ञान में मध्यवर्त्ती चर के संप्रत्यय का वर्णन किया है। मध्यवर्त्ती चर से तात्पर्य वैसे अनुमानित एवं अप्रेक्षणीय चरों से होता है जो प्रेक्षणीय स्वतन्त्र चर तथा प्रेक्षणीय आश्रित चर के बीच में आते हैं और आश्रित चर को प्रभावित भी करते हैं। 1938 में टॉलमैन ने 6 मध्यवर्त्ती चरों की एक सूची तैयार की। वे छः मध्यवर्त्ती चर हैं–मांग, भूख, विभेदन, पेशीय कौशल, प्राक्कल्पना तथा पूर्वाग्रह। 1952 में उन्होंने अपनी इस सूची में संशोधन किये और इसे घटाकर तीन कर दिये। वे तीन चर हैं–आवश्यकता तन्त्र, विश्वास मूल्य मैट्रीक्स तथा व्यवहार स्पेश।

4. सीखने के सिद्धान्त–उन्होंने यह स्पष्ट किया कि प्राणी चिन्ह द्वारा सीखता है। प्राणी जो कुछ भी सीखता है, वह पेशीय या ग्रन्थीय गतियों का क्रम न होकर अर्थ का क्रम होता है। दूसरे शब्दों में प्राणी चिन्हों (या उद्दीपनों)' का आपसी अर्थ या चिन्ह गेस्टाल्ट को सीखता है। सरल भाषा में यह कहा जा सकता है कि प्राणी लक्ष्य के प्रति व्यवहारात्मक रास्ते को सीखता है। धीरे-धीरे वह पर्यावरणी उद्दीपनों तथा अपनी प्रत्याशाओं के बीच के सम्बन्ध को सीख लेता है।

टॉलमैन के सिद्धान्त निम्नांकित तीन प्रयोगों पर आधारित हैं–

(क) पुरस्कार प्रत्याशा प्रयोग–टॉलमैन का मत था कि सीखने के दौरान पशुओं में कुछ प्रत्याशाएँ बन जाती हैं जिसकी पुष्टि होने से प्राणी में संज्ञानात्मक नक्शा विकसित हो जाता है।

(ख) स्थान या लक्ष्य सीखना प्रयोग–टॉलमैन ने अपने सीखने के सिद्धान्त में यह स्पष्ट किया है कि पशु संज्ञान सीखता है, न कि गतियों का कोई निश्चित क्रम। दूसरे शब्दों में पशु सूझ द्वारा सीखते हैं न कि कोई विशेष निश्चित गति करके। टॉलमैन, रिशी तथा कालिश (1946) के प्रयोग का मूल उद्देश्य यह जाँचना था कि पशु भूल-भुलैया में स्थान विशेष को सीखते हैं या अनुक्रिया विशेष को। परिणाम में यह देखा गया कि अनुक्रिया

सीखने वाले समूह के आठ चूहों में तीन ही चूहे कसौटी पर पहुँचने में समर्थ हो पाये। इस परिणाम से यह स्पष्ट हो जाता है कि स्थान सीखना समूह का निष्पादन अनुक्रिया सीखना समूह के निष्पादन से कहीं अच्छा था।

(ग) अव्यक्त सीखना–अव्यक्त सीखना से तात्पर्य वैसे सीखना से होता है जिसकी अभिव्यक्ति निष्पादन के रूप मे नहीं हुई होती है। टॉलमैन के अनुसार सीखने के लिए पुनर्बलन दिया जाता है तो इसकी अभिव्यक्ति निष्पादन के रूप में होती है। इस तरह से यह स्पष्ट है कि टॉलमैन के लिए सीखने के लिए पुनर्बलन की आवश्यकता नहीं होती है। जब सीखी गयी अनुक्रिया को निष्पादन में अभिव्यक्त करना होता है, तो पुनर्बलन की जरूरत पड़ती है।

टॉलमैन ने अपने प्रयोग में निम्नलिखित तीन बातों को पाया–

(1) चूहे के उस समूह के निष्पादन में बहुत थोड़ी उन्नति हुई जिसे पुनर्बलन कभी नहीं दिया गया था।

(2) वह समूह जिसे लगातार पुनर्बलन दिया गया था, उसके निष्पादन पूरे सातों दिनों में धीरे-धीर उन्नत होता गया।

(3) तीसरे समूह को जब पुनर्बलन ग्यारहवें दिन दिया गया, तो उसके निष्पादन में अचानक वृद्धि हो गयी। यह भी देखा गया कि इस तीसरे समूह का निष्पादन उस समूह से भी अधिक श्रेष्ठ हो गया जिसे लगातार पुनर्बलन दिया गया था।

टॉलमैन के अनुसार तीसरे समूह के निष्पादन से स्पष्टत: अव्यक्त सीखना के संप्रत्यय को समर्थन मिलता है क्योकि इस तीसरे समूह द्वारा प्रथम 10 दिनों में भूल-भुलैया सीख ली गयी थी परन्तु अभिव्यक्ति नहीं हो रही थी। जब ग्यारहवें दिन पुनर्बलन किया गया तो सीखी गयी अनुक्रिया की अभिव्यक्ति तुरन्त हुई।

आलोचनायें (Criticisms)—

(क) टॉलमैन ने अपने आप को व्यवहारवादी होने का दावा किया है परन्तु विभिन्न तरह के मध्यवर्त्ती चरों जैसे प्रत्याशा, संज्ञानात्मक नक्शा आदि जिसे न तो वस्तुनिष्ठ रूप से प्रेषित किया जा सकता है और न ही प्रयोगात्मक दृष्टिकोण से अध्ययन किया जा सकता है बल्कि उनका मात्र अनुमान लगाया जा सकता है। आलोचकों का इस प्रकार मत रहा है कि टॉलमैन के मनोविज्ञान द्वारा तीखे द्वैतवाद की झलक मिलती है जिसे कोई वैज्ञानिक व्याख्या नहीं माना जा सकता है।

(ख) मार्क्स एवं हिलिक्स (1963) ने यह कहा है कि ऑलमैन एक तार्किक रूप से समन्वित सिद्धान्त बनाने में असफल रहे हैं। दूसरे शब्दों में इनका मनोविज्ञान तार्किक रूप से समन्वित नहीं था। उनके सिद्धान्त में बहुत सारे चरों की व्याख्या की गयी है तथा बहुत सारे प्रश्नों का जवाब भी ठीक ढंग से नहीं दिया जा सका है। समग्र रूप से उनके व्यवहारवाद का स्वरूप बिखरा हुआ नजर आता है जिसके पहलुओं के बीच संगतता कम है।

(ग) टॉलमैन ने स्पष्ट व्यवहार पर बल डाला है परन्तु साथ-ही-साथ उन्होंने कई तरह के स्पष्ट चरों का भी वर्णन किया है। प्रश्न यह उठता है कि वे अस्पष्ट चर किस तरह से स्पष्ट चरों से सम्बन्धित होते हैं? टॉलमैन अपने सिद्धान्त में इस प्रश्न का जवाब नहीं दे पाये हैं।

इन आलाचनाओं के बावजूद टॉलमैन का मनोविज्ञान पर काफी महत्वपूर्ण प्रभाव रहा है। हालांकि कुछ बिन्दुओं पर टॉलमैन के विचार अन्य व्यवहारवादियों के विचार से टकराये हैं, फिर भी उनका महत्व कुछ और ही है। इस मतभेद के बावजूद अन्य व्यवहारवादियों द्वारा उनके इस विचार को सराहा गया है कि सीखने के लिए मध्यवर्त्ती चरों का होना अनिवार्य है। शायद यही कारण है कि हल ने जो एक अन्य व्यवहारवादी थे, सीखने के क्षेत्र में खुले रूप से मध्यवर्त्ती चरों का उपयोग किये हैं।

2.5.5 उत्तरकालीन व्यवहारवाद मे जे० आर० कन्टौर का अन्तर व्यवहारवाद :

कैन्टोर (Kantor) के अन्तर व्यवहारवाद के तहत निम्नांकित सात बिन्दुओं पर मुख्य रूप से प्रकाश डाला गया–

1. मनोविज्ञान अन्त:क्रियाएँ
2. अन्त:क्रियात्मक सेटिंग
3. सम्पर्क माध्यम
4. अन्तर व्यवहार इतिहास
5. आन्तरिक अन्त:क्रियाएँ
6. भावात्मक अन्त:क्रियाएँ
7. संवेग
8. संस्मरणीय अन्त:क्रियाएँ

कैनटोर के अन्तरव्यवहारवाद की कुछ आलोचनाएँ की गई हैं, जिसमें निम्नांकित प्रमुख हैं–

(क) कुछ आलोचकों का मत है कि कैनटोर ने कभी भी अपने लेखन में स्पष्टता नहीं दिखलाया है। वास्तव में वे क्या कहना चाहते हैं, कभी भी स्पष्ट नहीं हो सका है। उनकी शैली जरूरत से ज्यादा शब्दाडम्बरपूर्ण है, जिन्हें समझना थोड़ा कठिन है।

(ख) आलोचकों का मत है कि कैनटोर ने अपनी मनोवैज्ञानिक पद्धति को उन्नत बनाने में कम समय दिया है जबकि दूसरों की पद्धति की बखिया उखाड़ने में अधिक समय व्यतीत किये हैं। उन्होंने ऐसे संप्रत्ययों एवं सिद्धान्तों पर अपनी निरर्भरता दिखायी है जिसका महत्व सीमित है।

(ग) यह भी कहा है कि कैनटोर की पद्धति में शोधमूल्य का महत्व कम है। दूसरे शब्दो में उसकी पद्धति द्वारा महत्वपूर्ण प्रयोगात्मक शोधों की उत्पत्ति नहीं हुई है। उनके द्वारा किए गए कार्यों की समीक्षा करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि वे पूर्णत: सिद्धान्त उन्मुखी रहे हैं और उनकी संदर्भिका में मात्र एक प्रयोगात्मक शोध सम्मिलित है।

(घ) कुछ आलोचकों का मत है कि कैनटोर के योगदानों का स्वरूप दार्शनिक अधिक तथा मनोवैज्ञानिक कम है।

इन आलोचनाओं के बावजूद कैनटोर का आधुनिक मनोविज्ञान पर प्रभाव पड़ा है। उनके द्वारा प्रतिपादित संप्रत्ययों का प्रयोग आधुनिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा काफी किया गया है। उनके इस विचार का आधुनिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा काफी स्वागत हुआ है कि मनोविज्ञान को एक प्राकृतिक विज्ञान के समान दर्जा मिलना चाहिए।

2.5.6 उत्तरकालीन व्यवहारवाद में अलबर्ट बैण्डुरा का योगदान : बैण्डुरा (Bandura)

बैण्डुरा के अनुसार मानव व्यवहार व्यवहारात्मक, संज्ञानात्मक तथा पर्यावरणी निर्धारकों का अन्योन्य अन्त:क्रिया का परिणाम होता है। अन्योन्य निर्धार्यता के प्रक्रिया पर्यावरणी बलों को नियन्त्रित करके अपने भाग्य को प्रभावित करते हैं परन्तु साथ-ही-साथ उन बलों से नियंत्रित भी होते हैं। उनका मत था कि व्यक्ति का व्यवहार पर्यावरणी बलों द्वारा प्रभावित होता है। इसके अलावा कुछ संज्ञानात्मक कारकों जैसे प्रत्यक्षण, प्रत्याशा, चिन्तन आदि को भी उन्होंने व्यवहार का प्रमुख कारण बतलाया। इन संज्ञानात्मक कारकों की स्वीकृति से उनके

व्यवहारवाद में निश्चित रूप से मानसिक कारकों का समावेश हो जाता है। यह एक ऐसा कारक था जिसे अन्य व्यवहारवादी जैसे-वाटसन, स्कीनर आदि को कतई पसन्द नहीं था। शायद यही करण है कि बैण्डुरा के व्यवहारवाद को "मुलायम व्यवहारवाद" कहा जाता है जो स्कीनर तथा वाटसन के आमूलक या कठोर व्यवहारवाद से भिन्न था।

बैण्डुरा ने आत्म-तंत्र के संप्रत्यय को अपने व्यवहारवाद में काफी अहं बतलाया है जो उसे स्कीनर के व्यवहारवाद से भिन्न कर देता है। आत्म तंत्र का निर्माण संज्ञानात्मक कारकों से होता है। इसका प्रभाव व्यवहार तथा पर्यावरण दोनों पर पड़ता है। अगर व्यक्ति का व्यवहार सिर्फ पर्यावरणी कारकों द्वारा प्रभावित होता, तो उसके व्यवहार में काफी परिवर्त्तन होता तथा व्यक्ति के व्यवहार में असंगतता अधिक होती है। लेकिन सच्चाई यह है कि व्यक्ति का व्यवहार अधिक संगत तथा समन्वित होता है।

मनोविज्ञान में बैण्डुरा का महत्व खासकर उनकी मॉडलिंग प्रविधि या प्रेक्षाणात्मक सीखना की प्रविधि से है। उनका मत है कि व्यक्ति बहुत सारे व्यवहारों को दूसरों को वैसा करते देखकर सीख लेता है। इस तरह से उन्होंने सीखना तथा निष्पादन के बीच अन्तर किये हैं। उन्होंने यह स्पष्ट किये हैं कि व्यक्ति बिना कोई व्यवहार किये हुए भी सीख सकता है। सीखने की प्रक्रिया को सम्पन्न होने के लिए अनुक्रिया का होना अनिवार्य नहीं है। दूसरे शब्दों में व्यक्ति प्रेक्षण द्वारा सीख लेता है। बैण्डुरा (1977) के अनुसार सीखने के दो प्रमुख स्रोत बतलाये गये हैं-अनुक्रिया परिणाम तथा मॉडलिंग। इन दोनों का वर्णन निम्नांकित है-

1. अनुक्रिया परिणाम-कोई भी अनुक्रिया जिसे व्यक्ति करता है, के कुछ परिणाम होते हैं उसमें तुष्टि या खोज पैदा करता है। कुछ ऐसे परिणाम होते हैं जिसे व्यक्ति संज्ञानात्मक रूप से ध्यान नहीं दे पाता है। परणिामतः उसका प्रभाव व्यक्ति पर थोड़ा होता है। जब व्यक्ति कोई जटिल व्यवहार करता है तो उसमें संज्ञानात्मक चिन्तन होता है जिसका अनुक्रिया के परिणाम पर प्रभाव पड़ता है। सामान्य रूप से किसी भी अनुक्रिया परिणाम द्वारा तीन महत्वपूर्ण कार्य किये जाते हैं जो निम्नांकित हैं-

(क) यह यक्ति को विशेष सूचना प्रदान करता है।

(ख) इससे व्यक्ति के भविष्य का व्यवहार अभिप्रेरित करता है।

(ग) इससे व्यक्ति का वर्त्तमान व्यवहार पुनर्बलित होता है।

2. मॉडलिंग-बेण्डुरा के लिए अनुक्रिया परिणाम तक ही सीखना सीमित नहीं होता है। उनका मत है कि माडलिंग या प्रेक्षणात्मक सीखना द्वारा ही सीखने की अधिकतर प्रक्रियाएँ सम्पन्न होती हैं। मॉडलिंग में व्यक्ति दूसरों को व्यवहार करते हुए देखता है और उसे भविष्य में उपयोग करने के लिए धारण कर लेता है।

(1) वाह्य पुनर्बलन-इससे तात्पर्य वैसे पुनर्बलन से होता है जिसे व्यक्ति प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा प्राप्त करता है। यह कुछ सामग्री जैसे-धन व्यक्ति को दिया जा सकता है या कोई संकेत के रूप में जैसे, प्रशंसा आदि दी जाती है। यह धनात्मक जैसे पुरस्कार या ऋणात्मक जैसे दण्ड के रूप में भी हो सकता है। यह अन्तरस्थ जैसे स्वाभाविक परणिाम से होने वाला या बाहरी अर्थात् यथेष्ट परिणामों से भी उत्पन्न हो सकता है।

(2) स्थानापन्न पुनर्बलन-स्थानापन्न पुनर्बलन का आधार स्थानापन्न अनुभूति होता है। स्थानापन्न अनुभूति से तात्पर्य दूसरों द्वारा किये गये व्यवहार के परिणामों के प्रेक्षण द्वारा सीखने से होता है। बैण्डुरा का मत है कि पुनर्बलन का अनुभव प्रत्यक्षतः नहीं होता है। जब हमलोग दूसरों को ईनाम या दण्ड पाते प्रेक्षण करते हैं तो हमलोग आसानी से यह सीख लेते हैं कि कुछ व्यवहार के धनात्मक परणिाम होते हैं तथा कुछ व्यवहार के परिणाम ऋणात्मक होते हैं। बैण्डुरा, रॉस तथा रॉस (1964) ने एक प्रयोग किया जिसमें इन लोगों द्वारा माडलिंग में स्थानापन्न पुनर्बलन की भूमिका का अध्ययन किया गया है। परिणाम में देखा गया कि उस समूह ने उस समूह की तुलना में अधिक आक्रमकता दिखायी जिसे नकारात्मक या ऋणात्मक रूप से पुनर्बलन किया गया था।

(3) **आत्म-उत्पादित पुनर्बलन**—प्रत्यक्ष पुनर्बल तथा स्थानापन्न पुनर्बलन के अलावा व्यवहार आत्म-उत्पादित परिणामों द्वारा भी संपोषित होता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने लिए कुछ-न-कुछ मानक का निर्धारण करता है और उसी के अनुरूप व्यवहार करता है। ऐसी परिस्थिति में उसे अपने व्यवहार से संपोषित करने में किसी बाह्य अपुनर्बलन की जरूरत नहीं पड़ती है। यही मानक उनके व्यसवहार को बनाये रखता है तथा उनके व्यवहार में संगतता की व्याख्या भी करता है। इस प्रकार लोग अपने व्यवहार को उसके परिणाम के आधार पर संचालित एवं नियंत्रित करते हैं।

कुछ मनोवैज्ञानिकों द्वारा बैण्डुरा की आलोचना इस बिन्दु पर की गयी है कि उन्होंने अपने व्यवहारवाद में कुछ प्रमुख संप्रत्यय जैसे संज्ञान या प्रत्याशा को सम्मिलित करके व्यवहारवाद के वस्तुनिष्ठ स्वरूप को नष्ट कर दिया है। यह आलोचना विशेषकर कठोर व्यवहारवादियों जैसे स्कीनर, वाटसन आदि द्वारा की गयी है।

इन आलोचनाओं के बावजूद बैण्डुरा का आधुनिक मनोविज्ञान में काफी अधिक बोलबाला है। उनका महत्व प्रेक्षणात्मक सीखना में काफी अधिक है जिसका उपयोग आधुनिक नैदानिक मनोवैज्ञानिकों ने अपने क्षेत्र में काफी अधिक किये हैं।

2.6 प्रारम्भिक व्यवहारवाद तथा उत्तरकालीन व्यवहारवाद में अन्तर

प्रारंभिक व्यवहारवाद के चैम्पियन वाटसन हैं तथा उत्तरकालीन व्यवहारवाद में हल, गथरी, स्कीनर, टॉलमैन, बैण्डुरा आदि का नाम मुख्य रूप से लिया जाता है। यद्यपि उत्तरकालीन व्यवहारवादियों द्वारा वाटसन द्वारा तैयार किए गये ढाँचे को सामान्य रूप से पसंद किया गया फिर भी इन लोगों द्वारा उनकी मनोविज्ञानिक पद्धति को उन्नत बनाते हुए कुछ मौलिक योगदान करने की कोशिश की गयी। यदि हम इन दोनों व्यवहारवादों के योगदान की एक सामान्य तुलना करें तो पायेंगे कि कुछ बिन्दुओं पर इन दोनों में कुछ विभिन्नताएँ हैं, जो इस प्रकार हैं—

1. आधुनिक समय में वाटसन के व्यवहारवाद के मात्र कुछ संप्रत्ययों को ही स्वीकार किया गया है कि लेकिन उनके समग्र संप्रत्ययों की प्रशंसा नहीं की गयी है परन्तु उत्तरकालीन व्यवहारवादियों के समग्र संप्रत्ययों एवं विचारों को आधुनिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रशंसा की गयी है तथा उसे काफी यथार्थपूर्ण बतलाया गया है।

2. आरम्भिक व्यवहारवादियों का कार्यक्षेत्र अधिक विस्तृत रहा है क्योंकि इन लोगों द्वारा कई तरह के संप्रत्ययों जैसे—स्मृति, संवेग, चिन्तन, सीखना आदि के अध्ययन में अभिरुचि दिखायी गयी है। परन्तु उत्तरकालीन व्यवहारवादियों द्वारा मात्र कुछ चयनित क्षेत्र जैसे—सीखना, अभिप्रेरणा आदि में ही अभिरुचि दिखायी गयी। इस तरह से उत्तरकालीन व्यवहारवादियों का दृष्टिकोण आरम्भिक व्यवहारवादियों की तुलना में अधिक बिन्दु केन्द्रित था।

3. उत्तरकालीन व्यवहारवादियों के संप्रत्यय, विचारधारा एवं सिद्धान्त नियंत्रित सबूत तथा प्रयोगात्मक समर्थन पर आधारित है जबकि प्रारम्भिक व्यवहारवादियों के संप्रत्यय, विचारधारा एवं सिद्धान्त का आधार ऐसा प्रयोगात्मक समर्थन नहीं बल्कि मात्र अन्तर्ज्ञान का समर्थन है।

4. प्रारम्भिक व्यवहारवाद तथा उत्तरकालीन व्यवहार में एक अन्य अन्तर इस समस्या की व्याख्या से है कि व्यक्ति किस तरह से अपने व्यवहार को उन्नत बनाता है। वाटसन द्वारा व्यक्ति के व्यवहार को उन्नत बनाने या जिसे आज व्यवहार परिमार्जन के नाम से जाना जाता है की किसी स्पष्ट प्रविधि का वर्णन नहीं किया गया है। उन्होंने व्यवहार को उन्नत बनाने के लिए मात्र सामान्य विषय पर कुछ बल डाले थे। परन्तु उत्तरकालीन व्यवहारवादियों द्वारा व्यवहार परिमार्जन की कई प्रविधियों का वर्णन किया गया है। इन प्रविधियों द्वारा व्यक्ति

की आदतों एवं अन्य व्यवहारों को उन्नत बनाने में काफी सफलता मिली है।

स्पष्ट हुआ कि उत्तरकालीन व्यवहारवादियों का सिद्धान्त एवं संप्रत्यय कई अर्थों में आरम्भिक व्यवहारवाद के सिद्धान्तों से भिन्न है।

2.7 सारांश

1. संरचनावाद तथा प्रकार्यवाद के विरोध में वाटसन ने (1913 ई०) में व्यवहारवाद की संस्थापना की। उनके व्यवहारवाद के दो उप संप्रदाय हैं—प्राथमिक तथा द्वितीयक। एक प्राथमिक संप्रदाय के रूप में वाटसन के व्यवहारवाद की प्रमुख विशेषताएँ हैं—वाटसन के अनुसार मनोविज्ञान प्राकृतिक विज्ञान की एक शाखा है जो मानव व्यवहार का अध्ययन करता है। उन्होंने शाब्दिक अभिव्यक्ति को भी व्यवहार में सम्मिलित किया। उसका सिद्धान्त एस० आर०सिद्धान्त पर आधारित है।

वाटसन ने अन्तर्निरीक्षण को अस्वीकार करते हुए मनोविज्ञान के अध्ययन के लिए चार विधियों की पहचान की थी—प्रयोग एवं प्रेषण, अनुबंधित प्रतिवर्त प्रविधि, परीक्षण कार्य विधि तथा शाब्दिक रिपोर्ट की विधि। उनकी पूर्वकल्पना भिन्न है कि पेशिय तथा गतियों, ग्रंथीय श्रावों, अनुक्रिया तत्वों के मिलने तथा प्रभावी उद्दीपन से व्यवहार उत्पन्न है। उन्होंने आत्मनिष्ठ आंकड़ों की उपेक्षा कर वस्तुनिष्ठ आंकड़ों पर बल डाला। बारंबारता के नियम तथा नवीनता के नियम को वाटसन ने संबंध के नियम के रूप में काफी मान्यता दी है। वाटसन का मत था कि प्राणी उद्दीपनों का व्यक्ति जन्मजात प्रवृत्तियों के द्वारा करता है। मन शरीर समस्या के संबंध में वाटसन के अनुसार प्राणी सिर्फ शरीर होता है, मन नहीं।

2. इस पाठ में वाटसन के व्यवहारवाद की द्वितीयक विशेषताओं का कुछ बिन्दुओं के अन्तर्गत उल्लेख किया गया है—भाषा विकास, चिन्तन, वाटसन का पर्यावरणवाद तथा निर्धार्यता।

3. वाटसन ने अपना गहन प्रयोगात्मक अध्ययन तीन क्षेत्रों में काफी किया—सीखना संवेग, स्मृति। उनके अनुसार सभी तरह की आदतें सीखने का ही प्रतिफल हैं। इसके लिए नियम बनवाये—बारंबारता तथा नवीनता का नियम। उन्होंने अनुबंधित अनुक्रिया के आधार पर सामान्यीकरण के नियम को सिद्ध किया। वाटसन ने संवेग के क्षेत्र में बच्चों पर प्रयोगात्मक अध्ययन कर बतलाया कि संवेग जन्मजात होते हैं। प्रयोगों के आधार पर वाटसन द्वारा प्रतिपादित प्रतिक्रिया व्याख्या पेशीय स्मृति तथा शाब्दिक स्मृति दोनों पर समान रूप से लागू होती है।

4. वाटसन के व्यवहारवाद की सबसे बड़ी आलोचना ज्ञान आधार पर हुई है कि उन्होंने चेतन तथा मन जैसे महत्वपूर्ण पहलू को नकार दिया है जिससे उनका अध्ययन सीमित हो जाता है। वाटसन की तीसरी आलोचना है कि एक तरफ उन्होंने अन्तर्निरीक्षण को अस्वीकार किया और दूसरी तरफ मौखिक प्रतिवेदन को स्वीकार कर लिया, इस सिद्धान्त की एक आलोचना है कि उनके आनुवंशिकता अस्वीकार कर वातावरण पर आवश्यकता से अधिक बल देने के कारण उनका सिद्धान्त आलोचकों के अनुसार खोखला है।

5. उत्तरकालीन व्यवहारवादियो में अनेक मनोवैज्ञानिक हैं जिसमें से गथरी भी एक है। वे सामीप्य अनुबंधन के सिद्धान्त के प्रबल समर्थक थे। उनका मत था कि कोई भी उद्दीपन पैटर्न प्रथम वार में ही अनुक्रिया के साथ साहचर्यात्मक शक्ति प्राप्त कर लेता है। इसलिए इसे एकाकी प्रयास सीखना कहते हैं। उत्तरकालीन व्यवहारवाद ने गथरी के योगदानों को निम्नांकित बिन्दुओं को विभक्त कर अध्ययन किया गया है—(1) समीपता द्वारा सीखना, (2) अभिप्रेरण, पुरस्कार एवं दंड, (3) विलोपन तथा विस्मरण, (4) आदतों को छोड़ना-बुरी आदतों को छोड़ने में गथरी ने तीन विधियों का वर्णन किया है—देहली विधि, थकान विधि तथा असंगत विधि (5) पूर्वकथन एवं नियंत्रण इत्यादि।

6. सीखने के क्षेत्र में हल ने 1943 ई० में एक सिद्धान्त दिया जिसे हल थियोरी ऑफ लरनिंग कहते हैं। उनके सिद्धान्त में 17 अभिगृहीत तथा 15 उप-प्रमेय हैं जिसका संक्षिप्त वर्णन अग्रलिखित है--अभिगृहित एक तथा दो का संबंध मस्तिष्क में उत्पन्न स्नायुविक क्रियाओं से है, तीसरे अभिगृहित का संबंध सीखने में पुनर्बलन की भूमिका से संबंधित है, चौथे अभिगृहित का संबंध आदत निर्माण से, पाँचवे अभिगृहित का संबंध प्राथमिक प्रणोद से, छठे अभिगृहित का संबंध उद्दीपन तीव्रता से, सातवें अभिगृहित का संबंध प्रोत्साहन अभिप्रेरण से, आठवें अभिगृहित का संबंध अत:शक्ति से, नौवें अभिगृहित का संबंध अवरोध तथा अपरोधात्मक अंत: शक्ति से, दसवें अभिगृहित का संबंध उद्दीपन सामान्यीकरण से, ग्यारहवें का संबंध उद्दीपन अंत:क्रिया से, बारहवें का संबंध व्यवहारात्मक दोलन से, तेरहवीं प्रतिक्रिया देहली से, 15 का संबंध प्रतिक्रिया विस्तार, 16 का संबंध विलोपन से एवं सतरहवें का संबंध व्यक्तिक भिन्नता से है। उन्होंने सीखने की चार विधि का वर्णन किया है--उपनियोजित प्रेक्षण विधि, नियोजित प्रेक्षण विधि, प्रयोगात्मक जांच विधि तथा प्राक्कल्पित निगमनात्मक विधि है।

7. स्कीनर ने सीखने के क्षेत्र में जिस सिद्धान्त को प्रतिपादित किये इसे साधनात्मक अनुबंधन कहते हैं। इसका अर्थ होता है कि प्राणी का व्यवहार ही लक्ष्य प्राप्ति में साधन का कार्य करता है। स्कीनर ने क्रिया प्रसूत अनुक्रिया के अनुबंधन को टाइप आर० अनुबंधन कहा। उन्होंने पुनर्बलन के संबंध में कहा कि प्राणी के क्रिया प्रसुत अनुक्रिया के करने के बाद पुनर्बलित उद्दीपन उपस्थित किया जाता है तो इससे क्रिया प्रसुत अनुक्रिया की शक्ति बढ़ जाती है। सीखने के क्षेत्र में स्कीनर के योगदानों को आठ प्रमुख भागों में बांटकर अध्ययन किया गया है--(1) अनुबंधन का मनोविज्ञान, (2) प्रणोद, (3) संवेग, (4) शेपिंग एवं अंधविश्वासी व्यवहार, (5) शाब्दिक व्यवहार, (6) शिक्षण मशीन तथा कार्यक्रमित सीखना, (7) व्यवहार परिमार्जन (8) वियोण्ड फ्रीडम डिगनिटी।

इस सिद्धान्त की सबसे मशहूर आलोचना है कि स्कीनर ने सीमित व्यवहारों का अध्ययन किया है अर्थात प्राणी के सरल व्यवहारों का अध्ययन कर उसे विदित सामान्यीकरण किये हैं जो आलोचकों के अनुसार गलत है। इस सिद्धान्त की दूसरी आलोचना है कि अपने सिद्धान्त में प्रकार्यात्मक संबंध के वर्णनात्मक प्रेक्षण पर ज्यादा जोर देने से उसके सैद्धान्तिक पहलू की उपेक्षा होती है।

मनोविज्ञान के क्षेत्र में उनके द्वारा किये गये योगदानों में स्कीनर बौक्स, पुनर्बलन अनुसूची तथा कार्यक्रमित सीखना विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

8. टॉलमैन मनोविज्ञान में सीखने के सिद्धान्त के लिए सबसे अधिक लोकप्रिय है। उनका सिद्धान्त उद्दीपन सिद्धान्त के अन्तर्गत आता है। उनके सिद्धान्त में व्यवहारवाद के गुण के साथ-साथ गेस्टाल्ट का भी कुछ गुण परिलक्षित होता है। उनके सिद्धान्त को चिन्ह गेस्टाल्ट, संज्ञानात्म्क सिद्धान्त आदि भी कहा जाता है। उनके अनुसार सीखने का तात्पर्य पशु में सीखने की परिस्थिति का एक संज्ञानात्मक नक्शा विकसित करने से होता है।

टॉलमैन के यागदानों को सीखने के क्षेत्र में चार भागों में रखकर अध्ययन कर सकते हैं--(1) स्वतंत्र चर, (2) अति चर, (3) मध्यवर्त्ती चर तथा (4) सीखने के सिद्धान्त--उनका सिद्धान्त तीन तरह के प्रयोगों पर आधारित है--पुरस्कार प्रत्याशा प्रयोग, स्थान या कल्प सीखना प्रयोग तथा अव्यक्त सीखना प्रयोग।

आलोचकों का कहना है कि टॉलमैन का मनोविज्ञान पूर्ण रूप से व्यवहारवादी नहीं है, उनके सिद्धान्त में द्वैतवाद की झलक मिलती है।

निष्कर्षत: उनके सिद्धान्त में मतभेद होने के बावजूद अन्य व्यवहारवादियों द्वारा उनके विचार को सराहा गया है कि सीखने के लिए मध्यवर्त्ती चरों का होना अनिवार्य है।

9. उत्तर व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिक का तात्पर्य वाटसन के व्यवहारवाद से कुछ बिन्दुओं में अलग हटकर दूसरा व्यवहारवादी सिद्धान्त दिया है। इनमें से जे० आर० कैन्टोर एक ऐसा व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिक है जिनकी कुछ अपनी विशेषता है। उन्होंने अपनी पद्धति को अन्तर व्यवहारवाद कहा। उनके अनुसार मनोविज्ञान प्राणी तथा उद्दीपन पस्तु की अन्त:क्रिया है। उन्होंने अपने सिद्धान्त को आठ बिन्दुओं विभक्त कर अध्ययन किये हैं–मनोविज्ञान अन्त:क्रियाएँ, अन्त:क्रियात्मक सेटिंग, संपर्क माध्यम, अन्तर व्यवहार इतिहास, आंतरिक अंत:क्रियावाद भावनात्मक, अन्त:क्रिया संवेग तथा स्मरणीय अन्त:क्रिया।

10. अलवर्ट बैण्डुरा के अनुसार मानव व्यवहार व्यवहारात्मक, संज्ञानात्मक तथा पर्यावरणी निर्धारकों का अन्योन्य अन्त:क्रिया का परिणाम है। उनका मत था कि प्राणी का व्यवहार पर्यावरणी बलों द्वारा प्रभावित होता है। बैण्डुरा ने आत्म तंत्र के संप्रत्यय को अपने व्यवहारवाद में काफी अहं बतलाया है। मनोविज्ञान के बैण्डुरा का महत्व खासकर मॉडलिंग प्रविधि या प्रेक्षणात्मक सीखना की प्रवृत्ति से है। उनका मत है कि व्यक्ति बहुत सारे व्यवहारों को दूसरों को वैसा करते देखकर सीख लेता है। उनके अनुसार सीखने के दो प्रमुख स्रोत हैं–(1) अनुक्रिया परिणाम तथा मॉडलिंग। उन्होंने माडलिंग की चार प्रक्रियाओं का वर्णन किये हैं–ध्यान, धारणा, पेशीय उत्पादन तथा अभिप्रेरण। बन्दुप ने सीखने में दो तरह के निर्धारकों को बतलाया है–पूर्ववर्त्ती निर्धारक तथा अनुवर्त्ती निर्धारक। अनुवर्त्ती निर्धारक में तीन तरह के कारकों को महत्वपूर्ण माना है–बाह्य पुनर्बलन, स्थानापन्न पुनर्बलन तथा अहम् उत्पादित पुनर्बलन।

इसके आलोचकों का कहना है कि बैण्डुरा ने अपने सिद्धान्त में संज्ञान को सम्मिलित कर व्यवहारवाद के वस्तुनिष्ठ स्वरूप को नष्ट कर दिया है।

इन आलोचनाओं के बावजूद इनके सिद्धान्त का उपयोग आधुनिक नैदानिक मनोविज्ञान में बहुत ज्यादा है।

11. प्रारंभिक व्यवहारवाद तथा उत्तरकालीन व्यवहारवाद का अध्ययन करने पर उनके बीच कई अंतर स्पष्ट हो जाते हैं–आधुनिक समय में प्रारंभिक व्यवहारवाद के कुछ संप्रत्ययों को ही माना गया है जबकि उत्तरकालीन व्यवहारवाद के समग्र संप्रत्ययों की प्रशंसा की गयी है। प्रारंभिक व्यवहारवादियों का कार्यक्षेत्र विस्तृत था जबकि उत्तरकालीन व्यवहारवादियों का कार्यक्षेत्र सीमित, उत्तरकालीन व्यवहारवादियों के संप्रत्यय आदि के प्रयोगात्मक समर्थन हैं जबकि आरंभिक व्यवहारवादियों के संप्रत्यय का केवल अन्तर्शान का समर्थन है।

अत: स्पष्ट है कि उत्तरकालीन व्यवहारवादियों का सिद्धान्त एवं संप्रत्यय कई अर्थों में आरंभिक व्यवहारवाद के सिद्धान्त एवं संप्रत्यय से काफी भिन्न है।

2.8 पाठ में प्रयुक्त कुछ प्रमुख शब्द

मनोविश्लेषण, वित्तीय बल, उद्दीपन, अन्तर्निरीक्षणात्मक, प्रतिवर्त, आन्तनिरीक्षण, अभिगृहीत, उद्दीपन, रूपान्तरण, अद्वैतवाद, यादृच्छिक, स्वरोच्चारण, चक्रीय, आवृतीय, पुनर्शिक्षा, इन्ट्रोडक्शन, सुत्रकरण, संतुष्टि, पुनमार्जन, प्रत्याछान, मूलप्रवृत्ति, संकुचित, प्रकार्यात्मक, आतमनिष्ठ, संप्रत्ययों, विस्मरण, पुनर्बलन, क्रियाप्रसूत, ऑटोक्विटिक, प्रतिध्वमिक।

2.9 अभ्यास के प्रश्न

2.9.1 लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. **वाटसन के व्यवहारवाद की द्वितीयक विशेषता को लिखें।**

   उत्तर–देखें 2.2

2. **वाटसन के प्रयोगात्मक सुत्रीकरण से आप क्या समझते हैं।**

   उत्तर–देखें 2.3

3. **वाटसोनियन व्यवहारवाद को एक सम्प्रदाय के रूप में वर्णन करें।**

   उत्तर–देखें 2.4

4. **उत्तरकालीन व्यवहारवाद को एक सम्प्रदाय के रूप में वर्णन करें।**

   उत्तर–देखें 2.5

2.9.2 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. **उत्तरकालीन व्यवहारवाद में वी० एफ० स्किनर के योगदानों का वर्णन करें। उसके गुण एवं दोषो का वर्णन करें ?**

   उत्तर–देखें 2.5.3

2. **उत्तरकालीन व्यवहारवाद में इरिविन और गथरी के योगदानों का वर्णन करें।**

   उत्तर–देखें 2.3.1

3. **उत्तरकालीन व्यवहारवाद में टॉलमैन तथा स्किनर के योगदानों का वर्णन करें।**

   उत्तर–देखें 4.5.3 तथा 2.5.4

4. **व्यवहारवाद का मूल्यांकन एक सम्प्रदाय के रूप में करें। प्रारंभिक के व्यवहारवाद तथा उत्तरकालीन व्यवहार में अन्तर बतायें तथा वाटसन के योगदानों का वर्णन करें।**

2.10. प्रस्तावित पाठ

1. मनोविज्ञान की पद्धतियाँ एवं सिद्धान्त : **शर्मा जे० वी०**
2. मनोविज्ञान का संक्षिप्त इतिहास : **अजिर्मुरहमान एवं असरफ जावेद**
3. Cotemporary Schools of Psychology : **Woodworth and Sheehan**

◆◆◆

गेस्टाल्टवाद
Gestalt School

पाठ-संरचना

3.0 उद्देश्य
3.1 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान से परिचय
3.2 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की संस्थापना
  3.2.1 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के संस्थापक के रूप में मेक्स वर्दाइमर
  3.2.2 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के संस्थापक के रूप में बुल्फ गैंग कोहलर
  3.2.3 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के संस्थापक के रूप में कर्ट कोफका
3.3 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का अन्य मनोवैज्ञानक संप्रदाय से विरोध
3.4 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का मूल प्रयोगात्मक योगदान
3.5 एक संप्रदाय के रूप में गेस्टाल्ट मनोविज्ञान
3.6 गेस्टलाल्ट मनोविज्ञान की आलोचनाएँ
3.7 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की वर्त्तमान स्थिति
3.8 सारांश
3.9 पाठ में प्रयुक्त कुछ प्रमुख शब्द
3.10 अभ्यास के लिए प्रश्न
  3.10.1 लघु उत्तरीय प्रश्न
  3.10.2 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
3.10 प्रस्तावित पाठ

3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में पाठकों को गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के सम्बन्ध में विस्तार से समझाया जाएगा। उसकी स्थापना के सम्बन्ध में भी जानकारी दी जाएगी। साथ ही साथ गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के संस्थापक जैसे-मैक्स बर्दाइमर, वुल्फगैग कोहलर, कर्ट कोफ्का आदि से सम्बन्धित संक्षिप्त चर्चाएं की जाएँगी। उसके अलावा गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के अन्य मनोवैज्ञानिक सम्प्रदाय से विरोध, उसके प्रयोगात्मक योगदान तथा एक सम्प्रदाय के रूप में गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की भी जानकारी दी जाएगी। इसके साथ-साथ गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की आलोचना एवं वर्त्तमान स्थिति की भी जानकारी विस्तारपूर्वक दी जायगी। अन्य पाठ की भाँति इस पाठ में भी पाठ का सारांश, पाठ के लिए शब्द कुंजी, अभ्यास के लिए प्रश्न तथा पाठ के लिए अन्य सामग्रियों को भी सम्मिलित किया जाएगा। हमारा विश्वास है कि पाठक इसे पढ़कर काफी लाभान्वित होंगे।

3.1 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान से परिचय

1912 में जिस साल जे० बी० वाटसन ने कोलम्बिया विश्वविद्यालय में कई व्याख्यान दिये जिसके परिणामस्वरूप 1913 में व्यवहारवाद की औपचारिक स्थापना हुई, मैक्स वर्दाइमर ने आभासी गति पर किये गये कई प्रयोगों का एक संयुक्त विश्लेषण प्रस्तुत किया। ये प्रयोग वूल्फगैंग कोहलर तथा कर्ट कौफ्का के सहयोग से किये गये थे। इन्हीं सब प्रयोगों के आधार पर मैक्स वर्दाइमर द्वारा जिस संप्रदाय की स्थापना की गयी, उसे गेस्टाल्ट मनोविज्ञान कहा गया, जो मनोविज्ञान का एक महत्वपूर्ण जर्मन स्कूल साबित हुआ। कोलहर तथा कोफ्का को इस स्कूल का सहसंस्थापक माना गया।

अंग्रेजी भाषा में "गेस्टाल्ट" का कोई वास्तविक अनुवाद तो नहीं है, परन्तु कुछ पदों जैसे–"प्रारूप", "आकार" या "आकृति" का उपयोग किया जाता है। इस स्कूल का प्रारंभ में प्रत्यक्षण के अध्ययन पर काफी जोर रहा। इस स्कूल की मुख्य अवधारणा यह थी कि समग्रता का प्रत्यक्षण उसके अंशों के प्रत्यक्षण का योग नहीं होता है। बाद में चलकर गेस्टाल्ट मनोविज्ञान ने अपना कार्य क्षेत्र सीखना, चिन्तन तथा स्मृति को भी बनाया। परणिामस्वरूप 1930 वाले दशक तक गेस्टाल्ट मनोविज्ञान ने अपने आप को मनोविज्ञान के एक संप्रदाय के रूप में पूर्णतः स्थापित कर लिया। कर्ट लेविन, आर० एच०, आर० एच० व्हीलर, ई० वर्नस्वीक तथा रोजर बार्कर को इस स्कूल का विकासक माना गया है।

3.2 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की संस्थापना

गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की संस्थापना मैक्स वर्दाइमर द्वारा की गयी जो आभासीय गति पर कई महत्वपूर्ण प्रयोग किये। कोहलर तथा कौफ्का इस स्कूल के सहसंस्थापक थे जो मैक्स वर्दाइमर के उक्त प्रयोगों में प्रयोज्य का भी काम कर चुके थे। अतः यहाँ इन तीनों मनोवैज्ञानिकों के योगदानों के बारे में जानना आवश्यक है।

3.2.1 मैक्स वर्दाइमर

वर्दाइमर का जन्म जर्मनी के प्राग नाम शहर में हुआ था। उन्होंने वहाँ कानून का अध्ययन किया। परन्तु फिर वे मनोविज्ञान में रुचि लेने लगे। उन्होंने कुल्पे के निदेशन में वुर्जवर्ग विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की।

वर्दाइमर की अभिरुचि गति प्रत्यक्षण के अध्ययन में थी। उनके सामने समस्या यह थी कि ऐसे उद्दीपन जो वास्तव में गतिहीन हैं, के प्रत्यक्षण को संवेदन का तत्व मानते हुए गति प्रत्यक्षण की व्याख्या किस तरह से की जा सकती है। कहानी इस प्रकार शुरू होती है कि वे छुट्टी के दिनों में रेलगाड़ी से वियाना से जर्मनी जा रहे थे। वे बरच में फ्रैंकफर्ट में ही रेलगाड़ी से उतर गए तथा रुककर एक नकली स्ट्रोवोस्कोप खरीदे। स्ट्रोवोस्कोप एक ऐसा यंत्र है जिसके सहारे स्थिर वस्तुओं को इस तरह वैकल्पिक रूप से अनावृत किया जाता है कि देखने वाले व्यक्ति को उसमें गति का अनुभव होता है। इस स्ट्रोवोस्कोप के सहारे उन्होंने कई प्रेक्षण किये और अन्तोगत्वा इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जो व्यक्ति प्रत्यक्षण करता है, उसका तालमेल पर्यावरण की हालतों या वस्तुओं से नहीं हो सकता है। गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की संस्थापना के पीछे इस विचार का महत्व सबसे अधिक रहा है।

आभासी गति की वैज्ञानिक व्याख्या प्रदान करने के लिए वर्दाइमर ने कई प्रयोग किए और स्पष्टतः पाये कि आभासी गति का प्रत्यक्षण तभी होता है जब दो दृष्टि उद्दीपनों के बीच का एक उचित समय अन्तराल हो। ऐसे प्रयोगों के परिणाम 1912 में प्रकाशित किये गए तथा वर्दाइमर ने आभासी गति के भ्रम को एक तकनीकी नाम दिया जिसे फाई-घटना कहा गया। वर्दाइमर ने इसे एक महत्वपूर्ण घटना बतलाया। उन्होंने यह स्पष्ट किया

कि जब प्रयोज्य किसी दृष्टि उद्दीपनों में आभासी गति का प्रत्यक्षण करता है, तो वह एक समग्रता का प्रत्यक्षण एक प्राथमिक एवं अविश्लेषणीय अनुभूति है और वह उसके अंशों के प्रत्यक्षण का योग नहीं है। प्रत्यक्षणात्मक समग्रता की अपनी विशेषताएँ होती हैं जो उस समग्रता के अंश के प्रत्यक्षण की विशेषताओं से भिन्न होती है। यह नियम आगे चलकर गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का आधारभूत नियम बन गया।

इस तरह वरदाइर्मर ने गेस्टाल्टवाद के विकास में विशेष रूप से और मनोविज्ञान के प्रयोगात्मक विकास में सामान्य रूप से महत्वपूर्ण योगदान दिया, जिन्हें निम्नलिखित स्तम्भों में दर्शाया जा सकता है–

(1) वरदाइमर का एक महत्वपूर्ण योगदान यह है कि उन्होंने गेस्टाल्टवाद को स्थापित किया। उन्होंने संरचनावाद (Structuralism) के विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण (analytic view) को खंडित करते हुए समग्रता या पूर्णता (wholeness) पर बल दिया, जिसके आधार पर गेस्टाल्टवाद की स्थापना एक सम्प्रदाय या स्कूल के रूप में "संभव हो सकी।" इसीलिए, वरदाइमर को निर्विवाद गेस्टाल्टवाद का जनक (founder) माना जाता है। इस आधार पर गेस्टाल्टवाद के क्षेत्र में वरर्दाइमर का वही स्थान है, जो स्थान व्यवहारवाद में वाटसन का है।

(2) वरदाईमर का योगदान प्रत्यक्षीकरण के क्षेत्र में देखा जा सकता है। काण्ट तथा टिचेनर ने संवेदना तथा कार्य के योगफल को प्रत्यक्षीकरण की संज्ञा दी–लेकिन, वरदाइमर ने इसका विरोध करते हुए प्रत्यक्षीकरण को संगठित तथा स्वतन्त्र रूप से अर्थपूर्ण प्रक्रिया माना। उनके इस योगदान से प्रत्यक्षीकरण के संगठनात्मक स्वरूप को स्वीकृति मिल पायी।

(3) एक प्रयोगात्मक मनोवैज्ञानिक के रूप में भी वरदाइमर का योगदान देखा जा सकता है। उन्होंने फाइ-फेनोमेनन पर सफलतापूर्वक प्रयोग किया, जिसमें कोहलर तथा कोफका ने प्रयोज्य का काम किया। इसी प्रयोग से मनोवैज्ञानिक विषयों को समष्टियों के रूप में देखने की परम्परा आरंभ हुई।

(4) वरदाइमर ने प्रत्यक्षीकरण को संगठित माना तथा संगठन के नियमों का भी उल्लेख किया। उन्होंने सर्वप्रथम प्रदर्शित किया कि समीपता, समानता, समापन, सारगर्भिता आदि नियमों के आधार पर उत्तेजना-क्षेत्र के विभिन्न अंश आपस में समाहित हो जाते हैं।

(5) उनका योगदान शिक्षण के क्षेत्र में देखा जा सकता है। वरदाइमर के विचारों से ही प्रभावित होकर कोहलर तथा कोफका ने शिक्षण के सूझ सिद्धान्त को स्थापित किया।

(6) चिन्तन की क्षेत्र में भी वरर्दाइमर ने योगदान दिया। विशेष रूप से उन्होंने रचनात्मक चिंतन पर अधिक बल दिया। 'Productive thinking' नामक उनकी पुस्तक उनकी मृत्यु के बाद 1945 में प्रकाशित हुई।

इस प्रकार देखा जाये तो यह स्पष्ट होगा कि वरर्दाइमर ने न केवल गेस्टाल्टवाद को स्थापित किया, बल्कि इसके साथ-साथ कई क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान भी दिया।

3.2.2 बुल्फगैंग कोहलर (1887-1967) :

कोहलर का जन्म 1887 में इस्टोमिया में हुआ तथा 1909 में उन्होंने स्टम्फ के निर्देशन में बर्लिन विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की। उन्होंने मैक्स प्लान्क से भौतिकी भी पढ़ा था तथा ध्वनिकी का भी अध्ययन किये थे। उनका डाक्टरीय शोध प्रबन्ध मनोध्वनिकी के क्षेत्र में था। डाक्टरीय उपाधि प्राप्त करने के बाद कोहलर फ्रैंकफर्ट चले गए जहां उनकी मुलाकात वर्दाइमर से हुई। 1913 में वे फ्रैंकफर्ट विश्वविद्यालय छोड़कर टेनेराईफ द्वीप चले गए जहाँ उन्होंने बन्दरों एवं वनमानुष का अध्ययन गंभीरता से किया। उन्होंने वनमानुष तथा मुर्गी के बच्चों में दृष्टि विभेदन का अध्ययन किये। कोहलर ने यह स्पष्ट किया कि इन पशुओं द्वारा भी उद्दीपनों के बीच संबंध का प्रत्यक्ष किया जाता है। कोहलर के अनुसार उद्दीपनों के बीच के संबंध का प्रत्यक्षण पशुओं की बुद्धि का द्योतक है और ऐसे संबंधों के अचानक प्रत्यक्षण को उन्होंने सूझ की संज्ञा दी

है। वनमानुष जिसने यह प्रत्यक्षण किया कि दो छड़ी को जब आपस से जोड़ दिया जाय, तो वह बाहर रखे केले को असानी से प्राप्त कर ले सकता है, एक सूझपूर्ण व्यवहार का नमूना है। कोहलर का मत था कि इस तरह की सूझ से सीखने की क्रिया संपन्न होती है।

कोहलर 1920 में जर्मनी में लौट आये और 1922 में स्टम्फ की जगह पर बर्लिन विश्वविद्यालय में प्राचार्य के पद पर नियुक्त हुए। वर्दाइमर भी बर्लिन विश्वविद्यालयलौट आये थे। इस तरह से कोहलर तथा वर्दाइमर का पुराना संबंध जो फ्रैंकफर्ट में स्थापित हुआ था, को फिर एक बार विकसित होने का मौका मिला। 1921 में कोहलर ने वर्दाइमर तथा कौफ्का के सहयोग से एक जरनल भी प्रकाशित करना प्रारम्भ कर दिये जो प्रयोगात्मक शोधों तथा गति के सिद्धान्तों का एक प्रमुख साधन था। इस तरह से वर्दाइमर, कोहलर तथा कौफका तीनों आपस में मिलकर बिना किसी तरह के मतभेद के कार्य करते रहे। फिर भी उन्होंने मनोविज्ञान के विभिन्न पहलुओं में विशिष्टीकरण किये। जैसे–कोहलर ने श्रव्य प्रत्यक्षण के क्षेत्र में जबकि वर्दाइमर ने चिन्तन एवं निर्णय के क्षेत्र में विशिष्ट अध्ययन किये।

3.2.3 कर्ट कौफ्का (1868-1941)

कौफ्का का जन्म बर्लिन में हुआ तथा बर्लिन विश्वविद्यालय से 1909 में पी–एच० डी० की उपाधि स्टम्प के निर्देशन में प्राप्त की। उनका डाक्टरीय शोध प्रबन्धालय पर था। वे 1910 में फ्रैंकफर्ट आये तथा उनका सम्पर्क कोहलर एवं वर्दाइमर से बढ़ा। 1911 में वे गिसेन जो फ्रैंकफर्ट से करीब 40 मील की दूरी पर था, में डोजेन्ट नियुक्त हुए। इस दूरी के बावजूद, कौफ्का का संबंध वर्दाइमर तथा कोहलर से अच्छा बना रहा। कौफ्का 1927 तक गिसने विश्वविद्यालय में बने रहे। जर्मनी में कौफ्का कोहलर तथा वर्दाइमर द्वारा प्रारंभ किये गए नये मनोविज्ञान (जिसे गेस्टाल्ट मनोविज्ञान कहा गया) की पहचान कुछ अमेरीकन मनोवैज्ञानिकों द्वारा भी की गयी। अत: उनलोगों ने इस मनोविज्ञान के सारांश प्राप्त करने की उत्सुकता व्यक्त की। परिणामस्वरूप, कौफ्का को वर्दाइमर तथा कोहलर ने अमेरिका से प्रकाशित "साइकोलॉजिकल बुलेटिन" के लिए लिखने को कहा। इस आग्रह के अनुरूप 1922 में कौफ्का ने इसमें एक शोधपत्र लिखा जिसका शीर्षक था : "परसेप्सन : एन इन्ट्रोडक्शन टू गेस्टाल्ट थियोरी"। इस शोधपत्र में इन तीनों मनोवैज्ञानिकों अर्थात् कोहलर, कौफ्का तथा वर्दाइमर द्वारा किये गए प्रयोगों का वर्णन था। 1921 में उन्होंने "डेवलपमेन्ट चाइल्ड साइकोलॉजी" प्रकाशन किया जिसे बाद में "दी ग्रोथ ऑफ दी माइन्ड" शीर्षके के तहत अनुवाद किया गया। 1924 में कौफ्का अमेरिका आये तथा कार्नेल विश्वविद्यालय एवं विसकोनसिन विश्वविद्यालय देखने गए। 1927 में स्मिथ कॉलेज के मनोविज्ञान विभाग के अध्यक्ष पद पर नियुक्त किये गए। जहाँ वे मृत्यु तक अर्थात् 1941 तक इस पद पर बने रहे। 1935 में उन्होंने प्रिंसिपुल्स ऑफ गेस्टाल्ट साइकोलॉजी नामक पुस्तक का प्रकाशन किये जो एक जटिल पुस्तक थी जिसे आम लोगों को समझना थोड़ा कठिन था। इसके बावजूद इस पुस्तक से उनकी लोकप्रियता काफी बढ़ी।

3.3 अन्य मनोवैज्ञानिक संप्रदायों के प्रति गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का विरोध

गेस्टाल्ट मनोविज्ञान द्वारा कई मनोवैज्ञानिक संप्रदायों के विरोध में कुछ आपत्तियाँ उठायी गयी हैं। यह घटना अपने आप में काफी मनोवैज्ञानिक महत्व रखती है। इस स्कूल द्वारा संरचनावाद, साहयर्चवाद तथा व्यवहारवाद के विरोध में व्यक्त किये गए विचारों का वर्णन निम्नांकित है–

1. संरचनावाद के विरुद्ध शिकायत–गेस्टाल्ट मनोविज्ञान द्वारा संरचनावाद के विरोध में दो बिन्दुओं पर आवाज उठायी गयी–तत्ववाद तथा स्थिरता प्राक्कल्पना। संरचनावादियों का मत था कि अनुभूति को उनके तत्वों

में विश्लेषित कर अध्ययन किया जा सकता है। गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों का मत था कि प्रत्यक्षणात्मक समग्रता का उसके विभिन्न अंशों में विश्लेषण करना संभव नहीं है। इनका मत था कि समग्र की कुछ अपनी विशेषताएं होती हैं जो अंशों की विशेषताओं का योग नहीं होती हैं। शायद यही कारण है कि प्रत्यक्षणात्मक समग्रता को उसके विशिष्ट भागों या अंशों में विश्लेषित करना संभव नहीं है। गेस्टाल्टवादियों ने तो यहां तक दावा किया है कि अनुभूति को उनके तत्वों में विश्लेषित करने का प्रयास में संरचनावादियों ने अनुभूति के मौलिक गुणों को ही नष्ट कर दिया है।

स्थिरता प्राक्कल्पना यह बतलाता है कि भौतिक घटना तथा मनोवैज्ञानिक घटना में एक-एक बिन्दु का संबंध होता है। इस तरह का विचार संरचनावादियों के "मनोदैहिक समानान्तरवाद के सिद्धान्त" द्वारा लक्षित होता है। दृष्टिभ्रम के क्षेत्र में गेस्टाल्टवादियों ने यह मत जाहिर किया है कि व्यक्ति जिसका प्रत्यक्षण करता है, वह ठीक वही नहीं होता है जो पर्यावरण में भौतिक रूप में उपस्थित होते हैं। मशहूर मूलर लायक भ्रम में तीर रेखा तथा पंख रेखा की लम्बाई वास्तव में बराबर होती है परंतु व्यक्ति पंख रेखा तीर रेखा से बड़ा समझता है। इस उदाहरण में स्थिरता कहाँ है ?

2. साहचर्यवाद के विरुद्ध शिकायत—गेस्टाल्ट मनोविज्ञान द्वारा साहचर्यवाद तथा कुछ अन्य मनोवैज्ञानिक जैसे—थॉर्नडाइक के विरोध में भी आवाज उठायी गयी। थॉर्नडाइक ने विभिन्न मनोवैज्ञानिक घटनाओं की व्याख्या के लिए साहचर्य के विभिन्न नियमों का उपयोग किया था। संरचनावादियों तथा थॉर्नडाइक द्वारा उपयोग किये गए साहचर्य कहा गया के विभिन्न नियमों को गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों द्वारा लाना बंडल प्राक्कल्पना का सार तत्व यह था कि अनुभूति तत्वों का एक संगठन होती है। ग्रेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों द्वारा कई प्रायोगात्मक शोध किये गये जो बंडल प्राक्कलन के विरोध में तथ्य उपस्थित करते हैं। गेस्टाल्टवादियों का मत था कि तत्वों के संबंध के बाण्ड अवास्तविक तथा कृत्रिम होते हैं। चूँकि अनुभूति का स्वरूप चवर्णात्मक होता है न कि आणविक होता है और इसमें समग्रता का गुण होता है अतः इसे किसी संबंध के नियम जो उसके अंशों को एक साथ बाँधे रहे, की जरूरत नहीं पड़ती है।

3. व्यवहारवाद के विरुद्ध शिकायत—गेस्टाल्ड मनोविज्ञान ने व्यवहारवाद तथा अन्य सभी वैसे मनोवैज्ञानिकों के विरुद्ध में जेहाद छेड़ा जो व्यवहार को पृथक उद्दीपन-अनुक्रिया इकाई में बाँटकर अध्ययन करते हैं। गेस्टाल्टवादियों का मत है कि व्यवहार का स्वरूप चवर्णात्मक होता है जिसे पृथक उद्दीपन अनुक्रिया इकाइयों में बांटना संभव नहीं है। इन लोगों द्वारा व्यवहारवाद के प्रति इसलिए भी आवाज उठायी गयी क्योंकि व्यहवाहरवादियों ने चेतन को मनोविज्ञान की विषय-वस्तु के रूप में अस्वीकृत कर दिया था। गेस्टाल्टवादियों का मत था कि मनोविज्ञान व्यवहार एवं चेतन दोनों के अध्ययन का विज्ञान है। मनोविज्ञान चेतन या तात्कालिक अनुभूति का अध्ययन करता है परन्तु संरचनावादियों द्वारा प्रस्तावित विश्लेषणात्मक तरीके से नहीं।

इन प्रमुख शिकायतों के अलावा गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों द्वारा शरीर क्रियात्मक संप्रत्ययों के उपयोग पर भी आपत्ति की गयी। मनोविज्ञान के कई स्कूलों या संप्रदायों द्वारा तंत्रिका तंत्र का विभिन्न संबंधित स्नायविक इकाईयों का एक क्रम माना गया है जो दूरभाष तंत्र के समान कार्य करता है। गेस्टाल्टवादियों द्वारा समाकृतिकता के सिद्धान्त के रूप में अलग व्याख्या प्रदान की है। इस नियम के अनुसार जो व्यक्ति प्रत्यक्षण करता है तथा मस्तिष्क में जो उसके फलस्वरूप उत्पन्न होता है, के बीच बिन्दु-से-बिन्दु का संबंध होता है। समकृतिकता के नियम में संयोजक बल तथा अवरोधक बल दोनों का एक निश्चित पैटर्न होता है जिससे मस्तिष्क में किसी वस्तु के नक्शे के समान चित्र बनता है।

3.4 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का मूल प्रयोगात्मक योगदान

आरंभ में गेस्टाल्ड मनोविज्ञान का सक्रिय योगदान सिर्फ प्रत्यक्षण के क्षेत्र तक ही सीमित रहा। परंतु बाद में इस मनोविज्ञान द्वारा अन्य क्षेत्रों जैसे—सीखना, चिन्तन, स्मृति आदि में भी सक्रिय योगदान किये गए। इन क्षेत्रों

में गेस्टाल्ट मनोविज्ञानिकों द्वारा कई प्रयोग भी किये गए। इन क्षेत्रों में गेस्टाल्ट मनोविज्ञान द्वारा किये गये योगदानों का वर्णन निम्नांकित है–

1. प्रत्यक्षण–प्रत्यक्षण के क्षेत्र में किये गए योगदानों के लिए गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का महत्व मनोविज्ञान के सभी स्कूलों से अधिक है। गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों द्वारा इस क्षेत्र में किए गए योगदानों को निम्नांकित पांच भागों में बांटकर वर्णन किया जा सकता है–

(१) अंश-समग्रता मनोविज्ञान–गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों ने यह स्पष्ट किया है प्रत्यक्षण में अन्तर होता है। इस तरह से गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के अनुसार प्रत्याक्षात्मक समग्रता उसके अंशों के प्रत्यक्षण से भिन्न होता है। प्रत्यक्षणात्मक समग्रता की अपनी कुछ विशेषताएं होती हैं जो अंश के प्रत्यक्षण की विशेषता से भिन्न होती है। प्रत्याक्षणात्मक समग्रता की दो विशेषताएँ होती हैं। पहला, ये प्रत्यक्षणात्मक समग्रता एक तरह से संगठित समग्रता होती है न कि संवेदनों का मात्र गुच्छन या समूहन। अगर हमलोग इस प्रत्यच्क्षणात्मक समग्रता को तोड़ना चाहें तो कुछ नयी चीज की उत्पत्ति हो जाएगी, न कि उसके अंश की विशेषताओं की उत्पत्ति होगी। इसका स्पष्ट मतलब यह है कि प्रत्यक्षणात्मक समग्रता की मौलिक विशेषताएँ विश्लेषण के बाद समाप्त हो जाती हैं। अत: प्रत्यक्षणात्मक समग्रता केवल समग्रता ही नहीं होती है बल्कि पृथक समग्रता होती हैं।

इस तरह से प्रत्यक्षणात्मक समग्रता के अविश्लेषित स्वरूप पर बल डालकर गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिक ने संरचनावादी मनोविज्ञान के तत्ववाद के आधार को काफी कमजोर कर दिये।

2. प्रत्यक्षणात्मक संगठन के नियम–गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों द्वारा कुछ नियम का प्रतिपादन किया गया है जिससे प्रत्यक्षणात्मक समग्रता का निर्धारण होता है। वर्दाइमर का मत **था** कि प्रत्यक्षणात्मक संगठन के नियम जन्मजात होते हैं। इसलिये उसे मूल संगठन का नियम भी कहा जाता है। इस तरह से इन नियमों के माध्यम से गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों ने प्रत्यक्षण में सीखने की भूमिका को कम किया है। ऐसे कुछ महत्वपूर्ण नियमों का वर्णन निम्नांकित हैं–

(क) समानता का नियम–यह नियम इस बात का बल डालता है कि वैसी वस्तु जिनकी संरचना समान होती है, उसे व्यक्ति एक साथ संगठित कर एक प्रत्यक्षणात्मक समग्रता के रूप में प्रत्यक्षण करता है।

(ख) समीपता का नियम–इस नियम के अनुसार वे सभी वस्तुएँ जो समान तथा स्थान में एक-दूसरे से नजदीक होते हैं, उसे व्यक्ति प्रत्यक्षणात्मक रूप से संगठित प्रत्यक्षण करता है।

(ग) निरन्तरता का नियम–इस नियम के अनुसार जिन वस्तुओं में एक दिशा में आगे बढ़ते रहने की निरन्तरता बनी रहती है, उसे व्यक्ति एक संगठित आवृति वाली तस्वीर के रूप में प्रत्यक्षण करता है।

(घ) वस्तुनिष्ठ सेंट का नियम–इस नियम के अनुसार यदि व्यक्ति वस्तु के किसी विशेष पैटर्न पर देखता है तो उससे एक तरह का मानसिक सेट उत्पन्न हो जाता है और उस सेट के कारण उद्दीपन पैटर्न में थोड़ा परविर्त्तन होने के बाद भी व्यक्ति वस्तु को पहले के समान ही देखता है।

(ङ) प्रैगनैन्ज का नियम–इस नियम को उत्तर आकृति का नियम भी कहा जाता है। यह नियम बतलाता है कि व्यक्ति देखे गए उद्दीपनों को एक संतुलित एवं समेकित आकृति के रूप में प्रत्यक्षण करता है हालांकि उद्दीपन पैटर्न इतना संतुलित एवं समेकित नहीं भी हो सकता है।

(च) संवृत्ति का नियम–सच पूछा जाए तो यह नियम उत्तम आकृति के नियम का ही एक हिस्सा है। इस नियम द्वारा यह पता चलता है कि जब प्रत्यक्षणात्मक वस्तु के कुछ अंश को अधूरा जोड़ दिया जाता है, तो व्यक्ति उसे अपनी ओर से पूरा करके एक सम्पूर्ण चित्र के रूप में देखता है।

(छ) आकृति एवं पृष्ठभूमि का नियम–यह नियम इस तथ्य पर बल डालता है कि प्रत्यक्षण किसी आकृति के रूप में संगठित हो जाता है जो एक निश्चित पृष्ठभूमि पर दिखाया जाता है। आकृति का एक मुख्य गुण यह होता है कि यह स्पष्ट एवं उत्कृष्ट होता है तथा पृष्ठभूमि तुलनात्मक रूप से अस्पष्ट एवं निष्कृट होते हैं। पलटावी आकृति में आकृति कभी पृष्ठभूमि में और पृष्ठभूमि कभी आकृति के रूप में पलटते हुए दीख पड़ती है।

प्रत्यक्षणात्मक संगठन के वे सभी नियमों के आधार पर गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिक द्वारा कई महत्वपूर्ण एवं सफल समान्यीकरण किये गए जिनसे इनके योगदानों की महत्ता काफी बढ़ गई है।

(3) वस्तु स्थिरता–प्रत्यक्षणात्मक संगठन के इन विभिन्न नियमों के आधार पर गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों द्वारा एक सामान्यीकरण यह किया गया कि व्यक्ति जिस वस्तु का प्रत्यक्षण करता है उसे विभिन्न आयामों से देखने के बावजूद एक समान ही देखता है। इसे प्रत्यक्षणात्मक स्थिरता की संज्ञा दी गयी है। जैसे, कोयला के एक टुकड़ा को धूप में रखकर देखा जाय तथा फिर छाया में रखकर देखा जाए तो दोनों ही हालत में व्यक्ति उसे कोयला के रूप में ही देखेगा, हालांकि धूप में दीप्ति के परावर्तन की मात्रा छाया में दीप्ति के परवर्तन की मात्रा से अधिक होगी। इसे दीप्ति स्थिरता कहा जाता है। इसी तरह से प्रत्यक्षण में आकार स्थिरता, रंग स्थिरता, प्रारूप स्थिरता आदि भी होती हैं। गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों का मत है कि प्रत्यक्षणात्मक स्थिरता हालातों या परिस्थितियों के बारे में दी गयी सूचना से प्रमाणित होती है। अगर इस तरह की सूचना प्रत्यक्षणकर्त्ता को नहीं दी जाती है, तो प्रत्यक्षणात्मक स्थिरता काफी हद तक कम हो जाती है।

(4) क्षेत्र गतिकी–गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों का संबंध चूँकि प्रत्यक्षणात्मक समग्रता से है, अत: इनका बल क्षेत्र गतिकी की व्याख्या पर स्वत: काफी अधिक है। बोरिंग (1950) ने कहा है कि गेस्टाल्टवादियों का क्षेत्र से मतलब एक ऐसे गत्यात्मक तंत्र से होता है जहाँ किसी एक भाग में परिवर्त्तन होने का प्रभाव दूसरे भाग पर भी सार्थक रूप से पड़ता है। मनोवैज्ञानिक अनुभूति का गत्यात्मक क्षेत्र स्वयं व्यक्ति एवं पर्यावरण के साथ उसके द्वारा किये गए अन्त:क्रिया होते हैं। मानव व्यवहार का आधार यही अन्त:क्रिया होता है। इस तरह के प्रत्यक्षणात्मक क्षेत्र में संयोजक बल तथा अवरोध बल दोनों ही होते हैं। प्रत्यक्षणों में जो संतुलन स्थिरता तथा सममिति होती है, उनका कारण यही बल होते हैं।

(5) फाई-घटना तथा समकृतिकता के नियम–1912 में बर्लिन विश्वविद्यालय में मैक्स वर्दाइमर ने गति प्रत्यक्षण के क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण प्रयोग किये। इन सभी प्रयोगों में कोहलर तथा कौफ्का ने प्रयोज्य के रूप में कार्य भी किये थे। इन प्रयोगों में उन्होंने स्पष्टत: यह पाया था कि जब दो समान दृष्टि उद्दीपनों को एक दूसरों से 1/15वें सेकण्ड के अंतराल से दिखलाया जाता है, तो प्रयोज्य को उद्दीपन एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक घूमते या चलते नजर आता है। इस घटना को बर्दाइमर ने फाई घटना कहा है। उन्होंने यह भी स्प्ष्ट किया है कि यदि 1/15 सेंकेण्ड से अन्तर उद्दीपन अंतराल में कमी या वृद्धि होती है तो गति का यह भ्रम अर्थात फाई-घटना समाप्त हो जाती है। फाई घटना से ही गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की नींव पड़ी समझी जाती है।

चूँकि गति का प्रत्यक्षणात्म्क क्षेत्र बाहर से घटित घटना के समान नहीं होता है, अत: प्रश्न यह उठता है कि इसकी व्याख्या कैसे संभव है? इसकी वैज्ञानिक व्याख्या करने के लिए गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों ने समकृतिकता के नियम का वर्णन किया है। इस नियम के अनुसार जो व्यक्ति वास्तविक रूप में देखता है तथा जो मस्तिष्क में घटना घटित होती है, के बीच एक-एक बिन्दु का संबंध होता है हालांकि इन दोनों के बीच की सदृश्यता वास्तविक रूप में नहीं भी हो सकती है। अत: इन दोनों के बीच का संबंध स्थान विशिष्ट है, न कि स्थलाकृतिक है। इस नियम के सहारे फाई-घटना की व्याख्या करते हुए गेस्टाल्टवादियों द्वारा यह पूर्वकल्पना की गयी है कि दो रोशनी या दृष्टि उद्दीपनों द्वारा मस्तिष्क में उत्तेजित दो केन्द्रों के बीच गत्यात्मक संबंध होता है।

इस गत्यात्मक संबंध का स्वरूप कुछ ऐसा होता है कि मस्तिष्क का एक उत्तेजित केन्द्र मस्तिष्क के दूसरे केन्द्र को प्रभावित कर पाता है।

2. सीखना–गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों ने सीखने के क्षेत्र में भी महत्वूपर्ण योगदान किये हैं। इन लोगों ने यह स्पष्ट किया कि सीखना में एक तरह के क्षेत्र का प्रत्यक्षात्मक संगठन होता है। सीखने के बाद क्षेत्र का प्रत्यक्षणात्मक संगठन होता है तथा व्यक्ति परिस्थिति को नये ढंग से देखता है। इन लोगों ने भी यह स्पष्ट किया कि प्राणी सूझ द्वारा सीखता है। सीखने की परिस्थिति में व्यक्ति के सामने एक समस्या होती है। वह इस समस्या के कई संभावित समाधान सोचता है तथा कई वैकल्पिक एवं अस्थायी प्राक्कल्पनाएँ तैयार करता है। अचानक उसमें सूझ उत्पन्न होती है और वह सही समाधान कर बैठता है। मार्क्स तथा क्रोनैन-हिलिक्स (1987) के अनुसार सूझ प्रत्यक्षणात्मक क्षेत्र में अचानक अन्तरण को कहा जाता है। चूंकि सूझ प्राणी में अचानक होती है इसलिए गेस्टाल्टवादियों का मत था कि सीखना भी अचानक होता है, न कि अभ्यास के साथ क्रमिक ढंग से धीरे-धीरे होता है। जैसे ही एक बार समस्या का सही समाधान हो जाता है, प्राणी अगले प्रयासों में बिना कोई यादृच्छिक व्यवहार किये चार समाधान पर जल्दी पहुँच जाता है। गेस्टाल्टवादियों ने सूझपूर्ण सीखना के चार व्यवहारात्मक सूचकांक बतलाया है। ये चार सूचकांक हैं–किंकर्त्तव्यवमूढ़ता से अचानक पूर्णता की ओर अन्तरण, नियम को समझने के बाद निष्पादन में तेजी एवं सहजता, उत्तम धारण तथा समान समस्यात्मक परिस्थिति में तत्परता के साथ समाधान का अन्तरण। इस अन्तिम प्रकार के अन्तरण को गेस्टाल्टवादियों ने पक्षान्तर कहा है।

3. चिन्तन–सीखने के प्रति गेस्टाल्टवादियों की जो विचारधारा थी उसका उपयोग चिन्तन के अध्ययन के क्षेत्र में भी किया गया। वर्दाइमर ने छोटे-छोटे बच्चों को विभिन्न तरह की ज्यामितीय समस्या देकर उनके चिन्तन का अध्ययन किया और उनके द्वारा किये गए प्रयोगों को एक पुस्तक प्रोडक्टीव थिंकिंग में प्रकाशित किया। सचमुच में, उन्होंने बच्चों द्वारा किये गये सर्जनात्मक चिन्तन की व्याख्या सीखने के गेस्टाल्टवादी नियमों का उपयोग करके किया। चिन्तन के अध्ययन में गेस्टाल्टवादियों को उर्जवर्ग स्कूल से प्रेरणा मिली थी। वर्दाइमर का मत था कि चिन्तन का अध्ययन समग्रता के रूप में किया जाना चाहिए। किसी समस्या के समाधान पर चिन्तन करते समय व्यक्ति की परिस्थिति के बारे में समग्र स्वरूप से ध्यान रखना चाहिए, न कि उसकी विस्तृतता में खो जाना चाहिए। व्यक्ति को कोई मद आँख मूँदकर नहीं उठाना चाहिए तथा समस्या के समाधान में समग्रता से अंश की ओर ही बढ़ना चाहिए। इनका मत था कि समस्या के समाधान पर चिन्तन करते समय जो त्रुटियां होती हैं, वे उत्तम त्रुटियाँ होती हैं (अर्थात् ऐसी त्रुटि होती हैं जिससे समस्या के समाधान में कुछ मदद मिलती है) न कि थॉर्नडाइक की बिल्ली के समान अंध त्रुटियाँ होती हैं। वर्दाइमर ने यह स्पष्ट किया कि चिन्तन में प्रयास एवं त्रुटि का स्थान नहीं होता है। उनके लिए चिन्तन हमेशा लक्ष्य निदेशित एवं सूझपूर्ण होता है। इसमें एक नये गेस्टाल्ट की उत्पत्ति होती है। कुछ अन्य गेस्टाल्टवादी जैसे डंकर (1945) मायर (1930-31) ने भी अपने प्रयोगों से यह स्पष्ट किया है कि चिन्तन सूझपूर्ण होता है तथा इसमें प्रत्यक्षणात्मक क्षेत्र की संरचना में परिवर्त्तन होता है।

वर्दाइमर ने चिन्तन के तीन प्रकार बतलाये हैं–ए, बी, तथा जेड। ए प्रकार का चिन्तन उत्पादक चिन्तन को कहा जाता है जिसमें व्यक्ति का सम्बन्ध निर्णयात्मक समस्याओं से होता है तथा जिसमें समूहन, पुनर्संगठन तथा महत्वपूर्ण विशेषताओं की खोज आदि की प्रक्रियाएँ प्रधान होती हैं। इस तरह के चिन्तन में व्यक्ति साधन का सम्बन्ध लक्ष्य से जोड़ने की कोशिश करता है। वाई प्रकार का चिन्तन प्रयास एवं त्रुटि तथा अंध चिन्तन के समान होता है। इस तरह के चिन्तन से "ए" प्रकार के चिन्तन में कमी आ जाती है। इस तरह के चिन्तन में यदि समाधान होता है तो वह मात्र अचानक ही होता है। "बी" प्रकार का चिन्तन अंशत: उत्पादक तथा अंशत: अनुत्पादक एवं यांत्रिक होता है। वर्दाइमर के अनसुार उत्पादक चिन्तन में विकेन्द्रीकरण तथा पुनर्केन्द्रीकरण की

प्रक्रियाएँ देखने को मिलती हैं। केन्द्रीकरण की प्रक्रिया में व्यक्ति के चिन्तन में परिस्थिति के बारे में व्यक्तिगत या आत्मनिष्ठ विचार से अनासक्त विचार की ओर अंतरण होता पाया जाता है। इसके परिणामस्वरूप व्यक्ति परिस्थिति को समग्र रूप से एवं वस्तुनिष्ठ परिप्रेक्ष्य में प्रेक्षण करता है। पुनर्केन्द्रीकरण की प्रक्रिया में व्यक्ति परिस्थिति को एक नया एवं बेधी विचार से देखता एवं समझता है। इससे एक नये दृष्टिकोण की उत्पत्ति होती है जिससे सृजनात्मक समाधान उत्पन्न होता है।

वर्दाइमर ने समस्या समाधान में पुनरावृत्ति के महत्व को अस्वीकृत कर दिया है। उन्होंने यह चेतावनी दी है कि यांत्रिक पुनरावृत्ति के सतत उपायों से प्राणी में यांत्रिक क्रियाएँ तथा अंध आदतों के निर्माण होने की संभावना तीव्र हो जाती है।

4. स्मृति–गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों द्वारा स्मृति के क्षेत्र में प्रत्यक्षण के नियमों का उपयोग किया गया है। उस समय स्मृति का एक प्रचलित सिद्धान्त यह था कि जब व्यक्ति किसी वस्तु या चीज का प्रत्यक्षण करता है और बाद में उसका प्रत्याह्वान करता है और यदि इसमें उसे सफलता मिलती है, जो इसका प्रमुख कारण यह है कि इस उद्दीपन का मस्तिष्क में एक चिह्न रह जाता है। जब यदि चिह्न मिट जाता है, तो व्यक्ति उस चीज या वस्तु का प्रत्याह्वान नहीं कर पाता है। गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों द्वारा इस सिद्धान्त को अस्वीकृत कर दिया गया हालांकि इन लोगों ने चिह्न के संप्रत्यय को काफी लाभदायक बतलाया है। इन लोगों का मत है कि स्मृति एक गत्यात्मक प्रक्रिया होती है जिसमें समय बीतने के साथ-साथ चिह्नों में कई तरह के क्रमिक परिवर्त्तन होते हैं। ऐसे क्रमिक परिवर्त्तन प्रत्यक्षणात्मक संगठन के नियम के अनुरूप होते हैं। उदाहरण के रूप में प्रेगनेन्ज के नियम को ले सकते हैं। वुल्फ (1922) ने अपने प्रयोग में इसे और स्पष्ट किया है। इन्होंने अपने प्रयोगों में प्रयोज्यों को कुछ साधारण अनियमित ज्यामितीय चित्र को पाँच सेकेण्ड के लिए दिखाया। इसके बाद विभिन्न समय अंतरालों जैसे 30 सेकेण्ड, 24 घण्टे तक तथा एक सप्ताह के बाद उन आकृतियों या चित्रों को रेखांकित करने के लिए कहा गया ; परिणाम में देखा गया कि प्रयोज्य अस्पष्ट आकृतियों को अधिक स्पष्ट करके तथा उसे एक उत्तम प्रारूप देकर रेखांकित किए। गेस्टाल्ट के इन सिद्धांतों का कुछ प्रयोगात्मक समर्थन अन्य लोगों से भी प्राप्त थे। गिब्सन (1929)ए बार्टलेट (1932) एवं आलपोर्ट एवं पोस्टमैन (1917) ने भी अपने प्रयोगों से यह स्पष्ट किया था कि प्रयोज्य धीरे-धीरे मौलिक सामग्रियों को अधिक स्पष्ट करते हैं और इस तरह से अपने प्रत्याह्वान या पुनरुत्पादन में वे विकृति उत्पन्न अवश्य कर देते हैं। लेकिन इस विकृति का स्वरूप उत्तम होता है। इन प्रयोगात्मक सबूतों से यह स्पष्ट हो जाता है कि स्मृति की व्याख्या प्रत्यक्षणात्मक संगठन के नियम द्वारा संभव है।

स्पष्ट हुआ कि गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों का प्रत्यक्षण, सीखना, चिंतन तथा स्मृति में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इन सभी क्षेत्रों में प्रत्यक्षण के क्षेत्र में किया गया योगदान सबसे अधिक महत्वपूर्ण रहा है और बाकी तीन क्षेत्रों में प्रत्यक्षण के क्षेत्र में निर्मित सिद्धान्तों एवं नियमों के ही मूल रूप का उपयोग किया गया है।

3.5 एक सम्प्रदाय के रूप में गेस्टाल्ट मनोविज्ञान

मनोविज्ञान के अन्य सम्प्रदायों के समान गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का योगदान एक संप्रदाय के रूप में भी काफी महत्वपूर्ण रहा है। इस स्कूल द्वारा अन्य सम्प्रदायों के समान विभिन्न पहलुओं पर स्पष्ट विचार व्यक्त किये गए हैं जिनका यहाँ वर्णन अपेक्षित है। एक संप्रदाय के रूप में गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के मुख्य योगदान को निम्नांकित छः प्रमुख भागों में बांटकर अध्ययन किया जा सकता है।

1. **मनोविज्ञान की परिभाषा एवं विधियाँ**–आरंभिक गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों जैसे–कोहलर, कौफ्का तथा वर्दाइमर का मत था कि मनोविज्ञान तात्कालिक अनुभूति का अध्ययन करता है जिसमें मूल रूप से स्मृति, चिन्तन, प्रत्यक्षण एवं सीखना जैसे कार्यों का अध्ययन किया जाता है। उन्होंने इसकी शुरूआत प्रत्यक्षण के

अध्ययन से किए और बाद में अन्य क्षेत्रों का भी अध्ययन किए। परन्तु उत्तरकालीन गेस्टाल्टवादी जैसे कर्ट लेविन ने इस बात पर बल डाला कि व्यवहार को भी मनोविज्ञान के अध्ययन विषय के रूप में सम्मिलित किया जाना चाहिए। उन्होंने कई अध्ययन किये जिसमें व्यवहार का संबंध प्रत्यक्षण से जोड़ने की कोशिश की गयी। वर्त्तमान स्थिति यह है कि गेस्टाल्टवादियों के अनुसार मनोविज्ञान प्राणी के व्यवहार तथा तात्कालिक अनुभूति दोनों का ही अध्ययन करता है। इन लोगों ने प्रयोग तथा अन्तर्निरीक्षण को मनोविज्ञान की उत्तम विधि बतलाया। लेकिन इन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि यह आत्मनिरीक्षण विधि संरचनावादियों के प्रशिक्षित आत्मनिरीक्षकों की विधि से भिन्न है।

2. **अभिगृहीत**–व्यवहारवाद के समान गेस्टाल्ट मनोविज्ञान ने भी अपने विचारों के स्पष्टीकरण के लिए कुछ अभिगृहीत का प्रतिपादन किया है। ऐसे अभिगृहीत के दो मुख्य प्रकार बतलाये गए हैं–प्राथमिक तथा द्वितीयक। गेस्टाल्ट मनोविज्ञानियों का समग्र अंश मनोविज्ञान एक प्राथमिक अभिगृहीत का उदाहरण है। इसके अनुसार समग्रता का प्रत्यक्षण उसके अंश के प्रत्यक्षण का योग नहीं होता है। समग्रता की विशेषताएँ अंश की विशेषताओं से भिन्न होती हैं। समकृतिकता के नियम, प्रत्यक्षणात्म्क संगठन के नियम, सीखने के बारे में असातत्यता विचार कुछ महत्वपूर्ण द्वितीयक अभिगृहीत के उदाहरण हैं। इन नियमों की चर्चा पहले की जा चुकी है। सीखने के बारे में असांत्यता विचार के माध्यम से गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों ने यह स्पष्ट किया कि सीखने की प्रक्रिया में अचानक असांतत्य वृद्धि होती है जिसका आधार सूझ होता है।

3. **मन-शरीर समस्या**–गेस्टाल्टवादियों के अनुसार मन-शरीर समस्या का आदर्श समाधान समकृतिकता का नियम है। यहनियम निश्चित रूप से एक समानान्तरवाद को बतलाता है। परन्तु यह समानान्तरवाद वुण्ट तथा टिचेनर के समानान्तरवाद से भिन्न था। गेस्टाल्टवादियों के लिए यह एक मनोशारीरिक समानान्तरवाद था क्योंकि उसमें प्रत्यक्षित क्षेत्र या मानसिक क्षेत्र तथा मस्तिष्कीय क्षेत्र में बिन्दु से बिन्दु का सम्बन्ध था जबकि संरचनावादियों के लिए इन दोनों के बीच मनोदैहिक समानान्तरवाद था क्योंकि इसमें मानसिक घटना तथा दैहिक घटना में बिन्दु से बिन्दु का सम्बन्ध होता है। इन दोनों क्षेत्रों के अलावा एक और क्षेत्र जिसे भौतिक क्षेत्र या भौगोलिक क्षेत्र जो प्रत्यक्षित क्षेत्र या मानसिक क्षेत्र से नहीं मिल सकता है जैसा कि हम विभिन्न तरह के भ्रम के प्रकार में होते पाते हैं, भी होता है।

4. **आंकड़ों की प्रकृति**–तात्कालिक अविश्लेषित अनुभव से प्राप्त आँकड़े ही गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के लिए प्रमुख आंकड़े थे। गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों ने इस तरह के आंकड़े को प्रदत्त कहा है। प्रत्यक्षण के अध्ययन में प्रदत्त का प्रयोग काफी होता है। उन्होंने तात्कालिक अविश्लेषित अनुभूति के आधार पर प्राप्त आंकड़ों को स्वीकार कर गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों द्वारा संरचनावादियों से काफी सादृश्यता दिखलायी है। परन्तु फिर भी गेस्टाल्ट मनोविज्ञानी संरचनावादी से इस अर्थ में भिन्न थे कि उन्हें संरचनावादियों द्वारा की गयी व्याख्या पसंद नहीं थी।

गेस्टाल्टवादियों ने सीखने तथा समस्या समाधान के क्षेत्र में व्यवहारात्मक आंकड़ों को भी स्वीकार किया है। इस तरह से गेस्टाल्ट मनोविज्ञानियों द्वारा व्यवहारवाद के मनोविज्ञान को काफी हद तक स्वीकार किया गया है। इस बिन्दु पर तब यह कहा जाता है कि गेस्टाल्ट मनोविज्ञानी ने संरचनावाद की तुलना में व्यवहारवाद के मनोविज्ञान को अधिक बर्दास्त किये। इनके बावजूद गेस्टाल्ट मनोविज्ञान व्यवहारवादियों से इस अर्थ में भिन्न थे कि वे लोग व्यवहार का अध्ययन करके उसे मनोवैज्ञानिक क्षेत्रों से, न कि केवल पर्यावरणी कारकों से, संबंधित करना चाहते थे।

5. **चयन का नियम**–गेस्टाल्टवादियों ने प्रत्यक्षणात्मक संगठन के विभिन्न नियमों का प्रतिपादन किया जिसके सहारे इस बात की व्याख्या होती है कि किसी विशेष आकृति के प्रकार को प्रत्यक्षण के लिए व्यक्ति चयन करता है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि प्रत्यक्षण के क्षेत्र में सभी अंशों की भूमिका होती है। अतः उनके लिए यह जानना अधिक महत्वपूर्ण है कि ये सारे अंश किस तरह से संगठित या संगठन के लिए चयनित होते

हैं। व्यक्ति क्यों क्षेत्र के कुछ अंश को आकृति के रूप में तथा क्यों क्षेत्र के कुछ अंश को पृष्ठभूमि के रूप में प्रत्यक्षण करता है ? रूबिन जो गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के प्रमुख समर्थक हैं, ने कुछ ऐसे नियमों का प्रतिपादन किया है जिसके सहारे प्रत्यक्षणात्मक समग्रता के कुछ अंश को व्यक्ति आकृति के रूप में तथा कुछ अंश को वह पृष्ठभूमि के रूप में प्रत्यक्षण करता है। एक ऐसे ही प्रमुख नियम के अनुसार जिस अंश या भाग को व्यक्ति स्पष्ट रूप से प्रत्यक्ष करता है, उसे आकृति समझा जाता है तथा जिस भाग को अस्पष्ट प्रत्यक्षण व्यक्ति करता है, उसे पृष्ठभूमि समझा जाता है। बाद में गिब्सन (1966) ने उद्दीपनों की कुछ ऐसी विशेषताओं का उल्लेख किया है जिससे चयन अधिक आसान हो जाता है।

6. संबंध का नियम–गेस्टाल्टवादियों के लिए संबंध की समस्या का स्वरूप कुछ वैसा नहीं था जैसा कि साहचर्यवादियों तथा संरचनावादियों के लिए था। संरचनावादियों के लिए चेतन के तत्व साहचर्य के विभिन्न नियमों द्वारा संबंधित होते हैं। इसे गेस्टाल्टवादियों ने बण्डल प्राक्कल्पना कहा है जिसे इन लोगों ने अस्वीकृत कर दिया है क्योंकि इन लोगों का मत था कि समग्रता का प्रत्यक्षण उसके अंशों के प्रत्यक्षण का योग नहीं होता है। इसलिए उसके अंशों को जोड़कर समग्रता का निर्णय करने का प्रत्यक्षण करना एक बेकार एवं अर्थहीन प्रयास है। गेस्टाल्टवादियों का मत है कि यदि बण्डल प्राक्कल्पना को सही मान लिया जाता है तो प्रत्यक्षण को साधारण एवं आरंभिक प्रत्यक्षणों का मात्र एक योग माना जाएगा जो वह वास्तव में नहीं है। गेस्टाल्टवादियों ने यह भी स्पष्ट किया कि प्रत्यक्षणात्मक संगठन के नियम को संबंध का नियम कहना अनुचित होगा क्योकि इन नियमों से यह पता चलता है कि किस तरह से एक विशेष संरचना की उत्पत्ति होती है, न कि यह पता चलता है कि अमुक संरचना की उत्पत्ति में कौन सा तत्व संबंधित होंगे। यह कहना न होगा कि अन्य संप्रदायों के समान गेस्टाल्ट ने मनोविज्ञान की तात्कालिक अनुभूति तथा व्यवहार के पूर्ववर्त्ती तथा परवर्त्ती कारकों के ऊपर अधिक बल डाले हैं।

निष्कर्षत:–यह कहा जा सकता है कि एक संप्रदाय के रूप में गेस्टाल्ट मनोविज्ञान अन्य संप्रदायों से कम महत्वपूर्ण नहीं था। इसके विभिन्न अभिगृहीत अभी भी आधुनिक शोध एवं प्रयोगों के लिए एक महत्वपूर्ण प्रेरणा स्रोत है।

3.6 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की आलोचनाएँ

यद्यपि गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का योगदान मनोविज्ञान के क्षेत्र में काफी महत्वपूर्ण रहा है फिर भी इसकी कुछ आलोचनाएँ की गयी हैं। इसकी प्रमुख आलोचनाओं में निम्नांकित उल्लेखनीय हैं–

(1) मार्क्स तथा क्रोनैन–हिलिक्स (1987) के अनुसार गेस्टाल्ट मनोविज्ञान जरूरत से ज्यादा सिद्धान्त पर आधरित है तथा उसकी अवधारणाओं के समर्थन में पर्याप्त सबूत की कमी है। इन लोगों ने तो यहाँ तक कह दिया है कि सम्पूर्ण गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का स्वरूप जरूरत से ज्यादा उदार है जिसे आनुभाविक रूप से परिभाषित करना थोड़ा कठिन है। जैसे, सूझ का संप्रत्यय एक ऐसा संप्रत्यय है जिसके बारे में सैद्धान्तिक रूप से अनुमन तो लगाया जा सकता है। परन्तु आनुभाविक रूप से उसे परिभाषित नहीं किया जा सकता है।

(2) हरोवर ने (1932) जो कौफ्का के छात्र हैं, अन्य आलोचकों के साथ यह कहते हुए सहमति व्यक्त की है कि गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों ने अपने अति महत्वपूर्ण पद अर्थात् "संगठन" को ठीक ढंग से परिभाषित नहीं किया है। इसके अलावा आलोचकों का यह भी मत है कि इस पद को अन्य पद जैसे अंसगठन से उनलोगों को भिन्न कर देना चाहिए था ताकि संगठन पर प्रयोगात्मक अध्ययन विशिष्ट रूप से किया जाए। इन आलोचकों ने यह भी कहा कि यदि संगठन पद को विभिन्न मनोवैज्ञानिकों द्वारा विभिन्न ढंग से व्याख्या करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है, तो प्रत्यक्षण का अध्ययन वैज्ञानिक ढंग से करना संभव नहीं होगा।

(3) गेस्टाल्ट मनोविज्ञान को लोगों ने रहस्यवादी या कल्पित होने का दावा किया है। इस आलोचना का आधार गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की जटिलता है। परंतु यह आलोचना शत-प्रतिशत सही नहीं है। सच्चाई यह है कि गेस्टाल्ट मनोविज्ञान, व्यवहारवाद के समान एक प्राकृतिक विज्ञान है, न कि एक तात्विक विज्ञान है।

(4) गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों की आलोचना समकृतिकर्त्ता की दैहिक पूर्वकल्पनाओं के कारण भी की गयी है। आलोचकों का मत है कि जो कुछ भी व्यक्ति देखता है, उसका मस्तिष्क में बनने वाले नक्शे का समकृतिक नियम अपने आप में एक विचित्र काल्पनिक पूर्वकल्पना है जिसका सबूत केवल अप्रत्यक्ष है। इस तरह की पूर्वकल्पना के प्रयोगात्मक परिणाम अप्रत्यक्ष हैं। इस तरह की पूर्वकल्पना से प्रयोगात्मक परिणाम की वैधता तथा स्वीकरण पर प्रश्न चिह्न लग जाता है।

(5) आलोचकों का मत है कि गेस्टाल्ट मनोवैनिकों ने जो प्रयोग किये हैं, उनके डिजाइन उत्तम नहीं हैं तथा साथ ही साथ असांख्यकीय एवं अपरिमाणक हैं। उनका आधार अन्तर्निरीक्षण है जिसे प्रतिकृत करना संभव नहीं है। इतना ही नहीं, आलोचकों का यह भी मत है कि इनके प्रयोगों में प्रयोज्यों को अनावश्यक संकेत दे दिया जाता था जो उनकी समस्या समाधान क्षमता को अज्ञात ढंग से प्रभावित करता था। इनसे उनके प्रयोग के परिणाम पूर्वाग्रहित हो जाते थे।

(6) कभी-कभी यह भी कहा जाता है कि गेस्टाल्ट मनोविज्ञान कोई नया मनोविज्ञान नहीं था तथा इसके नियम लम्बे अरसे से उपयोग में थे। परन्तु कुछ लोगों का मत है कि यह एक वैध आलोचना नहीं है क्योंकि मनोविज्ञान का किसी भी सप्रंदाय का जन्म अचानक नहीं हुआ है। इसके कुछ पूर्ववत्ती कारक रहे हैं जिसमें संबंधित संप्रदाय के बीज छिपे होते हैं। यही बात गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के साथ भी है।

(7) गेस्टाल्ट मनोविज्ञान पर एक आरोप यह भी है कि इस मनोविज्ञान में पूर्व अनुभूति को मान्यता नहीं दी गयी है। गेस्टाल्ट मनोविज्ञानियों ने प्रत्यक्षात्मक संसगठन के नियम को पूर्णतः जन्मजात माना है। व्यवहारवादियो के अनुसार गेस्टाल्ट मनोविज्ञानियों की यह एक भूल थी।

इन आलोचनाओं के बावजूद यह पूर्ण विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि गेस्टाल्ट मनोविज्ञान ने मनोविज्ञान के लिए काफी उपयोगी योगदान किया है। इनके शोधों तथा प्रयोगों से प्रत्यक्षण के सिद्धान्त को नया रूप मिला जो अपने आप में अद्वितीय है। आधुनिक समय में संज्ञानात्मक मनोविज्ञान में जो मनोवैज्ञानिकों की अभिरुचि जागृत हुई है, वह गेस्टाल्टवादियों का ही प्रभाव माना जा रहा है। गेस्टाल्टवादियों को संज्ञानात्मक मनोविज्ञान का बौद्धिक पितामह माना गया है।

3.7 गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की वर्त्तमान स्थिति

यद्यपि गेस्टाल्टवादियों द्वारा किये गये प्रयोगों से उनके संप्रदाय को कोई खास लोकप्रियता नहीं मिली, फिर भी इस मनोविज्ञान द्वारा दिये गये बलों से यांत्रिकवादी तथा विश्लेषणात्मक संप्रदायों का पुनर्परीक्षण तथा विश्लेषणात्मक संप्रदायों का पुनर्परीक्षण तथा पुनर्मूल्यांकन के द्वार खुल गये।

गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की वर्त्तमान स्थिति का मूल्यांकन करते हुए यह कहा जा सकता है कि क्रमबद्ध गेस्टाल्ट मनोविज्ञान में सार्थक परिवर्त्तन हुए हैं। परणिामस्वरूप, इसके उत्तम संप्रत्यय आज भी उपयोग में लाये जा रहे हैं। अमेरीकन प्रयोगात्मक मनोविज्ञान में जो संज्ञानात्मक मनोविज्ञान हैं, वह गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के सशक्त प्रभावों का ही प्रतिफल है।। अतः यह कहा जा सकता है कि गेस्टाल्ट मनोविज्ञान संज्ञानात्मक मनोविज्ञान के रूप में पुनर्जागृत हो गया है।

3.8 सारांश

पाठ के इस भाग में विषय वस्तु को संक्षिप्त रूप से व्यक्त किया जा रहा है–

(1) मैक्स वर्दाइमर ने आभासी गति पर किये गये कई प्रयोगों का एक विश्लेषण प्रस्तुत किया और इसी

विश्लेषण के आधार पर जिस संप्रदाय की स्थापना की गयी उसे गेस्टाल्ट मनोविज्ञान कहा गया। गेस्टाल्ट का अर्थ कुछ पदों के रूप में उपयोग किये गये हैं। जैसे–प्रारूप, आकार या आवृत्ति। इस स्कूल की मुख्य अवधारणा यह थी कि समग्रता का प्रत्यक्षण उसके अंशों के प्रत्यक्षण का योग नहीं है। इस मनोविज्ञान ने अपना कार्यक्षेत्र बाद में प्रत्यक्षण के अलावा सीखना, चिन्तन तथा स्मृति को भी बताया।

(2) गेस्टाल्ट मनोविज्ञान एक जर्मन स्कूल या संप्रदाय था जिसकी संस्थापना का श्रेय मैक्स वर्दाइमर को जाता है। उनके सामने समस्या थी कि ऐसे उद्दीपन जो वास्तव में गतिहीन हैं, के प्रत्यक्षण को संवेदन का तत्व मानते गति प्रत्यक्षणकी व्याख्या किस प्रकार हो सकती है। इसके लिए उन्होंने आभासी गति के लिए जो प्रयोग किया उसे फाई फेनोमेनन का नाम दिया गया। उन्होंने स्पष्ट किया कि जब प्रयोज्य की दृष्टि उद्दीपनों में आभासी प्रति का प्रत्यक्षण करता है तो वह एक समग्रता का गेस्टाल्ट का प्रत्यक्षण करता है, न कि पृथक उद्दीपनों के अनुक्रमण का। समग्रता का प्रत्यक्षण एक प्राथमिक एवं अविश्लेषणीय अनुमति है और वह उसके अंगों के प्रत्यक्षण का योग नहीं है। प्रत्यक्षणात्मक समग्रता की अपनी विशेषता होती है जो उस समग्रता के अंश के प्रत्यक्षण की विशेषता से भिन्न होती है। यह नियम आगे चलकर गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का आधारभूत नियम बन गया।

(3) कोहलर के वनमानुष पर अध्ययन के पश्चात यह स्पष्ट होता है कि पशुओं द्वारा भी उद्दीपनों के बीच संबंध का प्रत्यक्षण किया जाता है। कोहलर के अनुसार उद्दीपनों के बीच संबंध का प्रत्यक्षण पशुओं की बुद्धि का द्योतक है और ऐसे संबंधों के अचानक प्रत्यक्षण को उन्होंने सूझ की संज्ञा दी है। कोहलर का मत था कि इस तरह से सूझ से सीखने की क्रिया सम्पन्न होती है। कोहलर के इस प्रयोग से एक बार फिर गेस्टाल्ट सिद्धान्त को विकसित होने का मौका मिला।

(4) वर्दाइमर तथा कोहलर ने कोफ्का को अमेरिका से प्रकाशित साइकोलॉजिकल बुलेटिन के लिए लिखने के लिए कहा। इस आग्रह के अनुरूप 1922 में कौफ्का ने एक शोधपत्र लिखा जिसका शीर्षक था : ''परसेप्सन : सम इन्ट्रोडक्शन टू गेस्टाल्ट थियोरी''। 1935 में वे प्रिंसिपुल्स ऑफ गेस्टाल्ट साइकोलॉजी नामक पुस्तक का प्रकाशन किया जो एक जटिल पुस्तक थी। इसके बावजूद इस पुस्तक से गेस्टाल्ट के संस्थापक के रूप में उनकी लोकप्रियता काफी बढ़ी।

(5) गेस्टाल्ट मनोविज्ञान द्वारा कई मनोवैज्ञानिक संप्रदायों के विरोध में कुछ आपत्तियाँ उठायी गयी हैं–गेस्टाल्ट मनोविज्ञान द्वारा संरचनावाद के विरोध में दो बिन्दुओं पर आवाज उठायी गयी–तत्ववाद, तथा स्थिरता प्राक्कल्पना। इस मनोविज्ञान के द्वारा साहचर्यवाद तथा कुछ मनोवैज्ञानिक जैसे थॉर्डडाइक के विरोध की भी आवाज उठायी गयी है। गेस्टाल्टवादियों ने व्यवहारवाद तथा अन्य सभी वैसे मनोवैज्ञानिकों के विरुद्ध जेहाद छेड़ा है जो व्यवहार को पृथक उद्दीपन अनुक्रिया इकाई में बाँटकर अध्ययन करते हैं। गेस्टाल्टवादियों का मत है कि व्यवहार का स्वरूप वर्णात्मक होता है जिसे पृथक उद्दीपन अनुक्रिया इकाइयों में बाँटना संभव नहीं है।

इन विरोधों के अलावा गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों द्वारा शरीर क्रियात्मक संप्रत्ययों के उपयोग पर भी आपत्ति की गयी है।

(6) गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का सक्रिय योगदान बहुत से क्षेत्रों में रहा-प्रत्यक्षण, सीखना, चिन्तन स्मृति आदि। प्रत्यक्षण के पाँच क्षेत्र में गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का काफी योगदान रहा है। उनके योगदानों को पाँच भागों में बांटकर अध्ययन किया जा सकता है–अंश समग्रता मनोविज्ञान, प्रत्यक्षणात्मक संगठन के नियम, वस्तु स्थिरता, क्षेत्रगतिकी,फाई घटना तथा समकृतिकता के नियम। प्रत्यक्षणात्मक समग्रता उसके अंशों की समग्रता से भिन्न होती है, गेस्टाल्टवादियों द्वारा कुछ नियम का प्रतिपादन किया गया है जिसे प्रत्यक्षणात्मक संगठन का नियम कहते

हैं–समानता का नियम, समीपता का नियम, निरन्तरता का नियम, वस्तुनिष्ठ सेट का नियम, प्रैग्नेन्सन का नियम, संवृति का नियम, आकृति एवं पृष्ठभूमि का नियम।

गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों ने सीखने के क्षेत्र में प्रयोगात्मक अध्ययन कर सूझ के सिद्धान्त को प्रस्तुत किया है। उन लोगों के अनुसार कोई भी प्राणी सूझ के अनुसार ही सीखता है। चिन्तन के क्षेत्र में गेस्टाल्टवादियों का प्रयोग के आधार पर कहना है कि चिन्तन हमेशा लक्ष्य निर्देशित एवं सूझपूर्ण होता है। स्मृति के क्षेत्र में बार्टलेट,आल्पोर्ट तथा पोस्टमैन के प्रयोग से इस सिद्धान्त की पुष्टि होती है।

(7) एक सम्प्रदाय के रूप में गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के मुख्य योगदानों को अग्रलिखित छः भागों में बांटकर अध्ययन किया गया है–मनोविज्ञान की परिभाषा एवं विधियाँ, अभिग्रहित, भय शरीर समस्या, आंकड़ों की प्रकृति, चयन का नियम, संबंध का नियम। वर्त्तमान समय में गेस्टाल्टवादियों के अनुसार मनोविज्ञान प्राणी के व्यवहार तथा तात्कालिक अनुभूति दोनों का ही अध्ययन करता है। इस मनोविज्ञान के अनुसार समग्र अंश मनोविज्ञान एक प्राथमिक अभिगृहित है तथा समकृतिकता के नियम, प्रत्यक्षणात्मक संगठन के नियम आदि द्वितीय अभिगृहित हैं। इस नियम के अनुसार मन शरीर समस्या का आदर्श समाधन समकृतिकता का नियम है।

(8) गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की एक प्रमुख आलोचना इस बात पर हुई कि यह मनोविज्ञान पूर्व अनुमति को मान्यता नहीं देता है जबकि इसकी सार्थकता सिद्ध हो चुकी है। इसकी दूसरी आलोचना है कि यह सिद्धान्त आवश्यकता से अधिक सिद्धान्त पर आधारित है तथा इसकी अवधारणाओं में समर्थन में पर्याप्त सबूत की कमी है।

(9) गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की वर्त्तमान स्थिति का मूल्यांकन करते हुए कहा जा सकता है कि इसके उत्तम संप्रत्यय आज भी उपयेग में साथ जा रहे हैं तथा गेस्टाल्ट मनोविज्ञान संज्ञानात्मक मनोविज्ञान के रूप में पुनर्जागृत हो गया है।

3.9 पाठ में प्रयुक्त कुछ प्रमुख शब्द

गेस्टाल्ट मनोविज्ञान, चिन्तन, स्मृति, प्रारूप, आकार, आकृति, संप्रदाय, स्कूल, संप्रत्यय, समग्रता, संवेदन, सर्जनात्मक, सहसंस्थापक, संस्थापक, चवर्णात्मक, प्रत्यक्षण, आभासी गति, दृष्टिविभेदन, विशिष्टीकरण, संरचनावाद, साहचर्यवाद, व्यवहारवाद, प्रत्यक्षणात्मक समग्रता, समानान्तरवाद, पर्यावरण, साहचर्य, प्राक्कल्पना, प्रत्यक्षणात्मक संगठन, वस्तुनिष्ठ, समीपता, संवति, पृष्ठभूमि, वस्तु स्थिरता क्षेत्र गतिकी, गत्यात्मक क्षेत्र, अवपेवल, समकृतिकता, फाई घटना, भ्रम, सूझ, अभिगृहीत, तात्कालिक अनुभव, पूर्ववर्त्ती, संगठन।

3.10 अभ्यास के प्रश्न

3.10.1 लघु उत्तरीय प्रश्न

1. **गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का वर्त्तमान स्थिति क्या है ?**
   उत्तर–देखें 3.7
2. **गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का परिचय संक्षेप में दें।**
   उत्तर–देखें 3.1
3. **गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के मूल आधारतत्व (Tenets) का वर्णन करें।**
   उत्तर–देखें 3.4

4. गेस्टाल्ट मनोविज्ञान की सीमाओं का वर्णन करें।
   उत्तर–देखें 3.6

3.10.2 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के संस्थापक के रूप में कर्ट-कोफ्का के दृष्टिकोण को लिखें एवं उसके गुण एवं दोषों को स्पष्ट करें।
   उत्तर–देखें 3.2.3
2. गेस्टाल्ट मनोविज्ञान का अन्य मनोवैज्ञानिक सम्प्रदाय के विरोधों की विस्तृत चर्चा करें।
   उत्तर–देखें 3.3.3
3. गेस्टाल्ट मनोविज्ञान में संस्थापक के रूप में मैक्स वर्दाइमर के योगदानों का वर्णन करें।
   उत्तर–देखें 3.2.1
4. गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के योगदानों का मूल्यांकन प्रत्यक्षीकरण, शिक्षण तथा चिन्तन के क्षेत्र में करें।

3.11 प्रस्तावित पाठ

1. मनोविज्ञान का संक्षिप्त इतिहास : **अर्जीमुरहमान एवं अशरफ जावेद**
2. मनोविज्ञान की पद्धतियाँ एवं सिद्धान्त : **शर्मा जे० डी०**
3. मनोविज्ञान का इतिहास : **राम नाथ शर्मा**
4. Contemporary Schools of Psychology : **Woodworth and Sheehan**

◆◆◆

मनोविश्लेषण
Psychoanalysis

पाठ-संरचना

4.0 उद्देश्य
4.1 मनोविश्लेषण से परिचय
4.2 मनोविश्लेषण में फ्रायड का योगदान
4.3 फ्रायड के मनोविश्लेषण की आलोचना
4.4 एडलर का वैयक्तिक मनोविज्ञान
4.5 एडलर के वैयक्तिक मनोविज्ञान की आलोचना
4.6 फ्रायड तथा एडलर के बीच अन्तर
4.7 युंग का विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान
4.8 युंग के विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान की आलोचना
4.9 फ्रायड एवं युंग में अन्तर
4.10 सारांश
4.11 पाठ में प्रयुक्त कुछ प्रमुख शब्द
4.12 अभ्यास के लिए प्रश्न
4.12.1 लघु उत्तरीय प्रश्न
4.12.2 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
4.13 पाठ के लिए अन्य उपयोगी सामग्रियाँ

4.0 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ में पाठक को मनोविश्लेषण से सम्बन्धित जानकारी दी जाएगी। साथ ही साथ मनोविश्लेषण में फ्रायड के योगदानों की भी जानकारी दी जायगी। साथ ही साथ मनोविश्लेषण में फ्रायड के योगदानों की भी जानकारी दी जाएगी। साथ ही साथ फ्रायड के विद्रोही एडलर एवं युंग द्वारा फ्रायड के मनोविश्लेषण की आलोचनाओं की भी जानकारी दी जाएगी। उसके बाद एडलर के वैयक्तिक मनोविज्ञान तथा इसकी आलोचनाओं के सम्बन्ध में भी जानकारी दी जाएगी। फ्रायड एवं एडलर के बीच अन्तर को भी पाठक को स्पष्ट रूप से बतलाया जाएगा। उसके साथ ही युंग के विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान की भी जानकारी एवं आलोचनाओं की जानकारी तथा फ्रायड एवं युंग में अन्तर की जानकारी भी पाठक को विस्तारपूर्वक दी जाएगी।अन्य पाठ की तरह इस पाठ में भी पाठ का सारांश, पाठ में प्रयुक्त शब्द कुंजी, अभ्यास के लिए प्रश्न तथा पाठ के लिए अन्य उपयोगी सामग्रियों को भी शामिल किया जाएगा। हमारा विश्वास है कि पाठक उसे पढ़कर काफी लाभान्वित होंगे।

4.1 मनोविश्लेषण से परिचय

मनोविश्लेषण तथा उससे सम्बन्धित सम्प्रदाय समकालीन मनोविज्ञान का अंग बन गये हैं। मनोविश्लेषण एक ऐसा सम्प्रदाय है, जिसका जन्म न मनोविज्ञान से हुआ है और न दर्शन से। इसका जन्म चिकित्सा के कार्य से हुआ है। यदि विशाल दृष्टि से देखा जाय तो यह स्कूल मनश्चिकित्सा से सम्बन्ध रखता है। मनोविश्लेषण ने ऐसा प्रभावशाली सिद्धान्त स्थापित कर दिया है जो अन्य मनोविज्ञानियों को एक चुनौती के रूप में प्रतीत होता है।

मनोविश्लेषण की स्थापना सिगमंड फ्रायड (1856-1939) द्वारा की गयी जो एक चिकित्सक थे तथा जन्म से यहूदी थे। उन्होंने मनोविश्लेषण पद के तीन अर्थ बतलाये जो निम्नांकित हैं–

(1) मनोविश्लेषण मानसिक रूप से बीमार व्यक्तियों के उपचार की एक विधि है।

(2) मनोविश्लेषण व्यक्तित्व का एक सिद्धान्त है।

(3) मनोविश्लेषण मनोविज्ञान का एक सम्प्रदाय या स्कूल है।

4.2 मनोविश्लेषण में फ्रायड का योगदान

एक शैक्षिक मनोविज्ञानी के मनोविज्ञान के समान फ्रायड के मनोविज्ञान में क्रमबद्धता देखने को नहीं मिलती है। फिर भी उनके विचार एवं संप्रत्ययों की व्याख्या कई जिल्दों में की गयी है जिनका विस्तृत वर्णन करना तो यहाँ संभव नहीं है। इसके बावजूद फ्रायड द्वारा मनोविश्लेषण के संप्रदाय के तहत किये गये योगदानों को निम्नांकित सात शीर्षकों में बांटकर अध्ययन किया जा सकता है–

1. स्थलाकृतिक संरचना : चेतन, अर्द्धचेतन तथा अचेतन

फ्रायड ने मन के दो मुख्य स्तर बतलाये थे–चेतन तथा अचेतन। अचेतन के दो भिन्न स्तर होते हैं–अचेतन खास तथा अर्द्धचेतन। उन्होंने चेतन को परिभाषित करते हुए कहा है कि इसमें वे सारे मानसिक तत्व होते हैं जिनसे व्यक्ति एक दिये हुए क्षण से अवगत होता है। फ्रायड ने यह स्पष्ट किया कि मानसिक जिन्दगी का एक छोटा-सा हिस्सा ही चेतन होता है। पूर्व चेतन या अर्द्धचेतन से तात्पर्य वैसे मानसिक तत्वों से होता है जो चेतन में तो नहीं होते हैं। परन्तु थोड़ा-सा प्रयास करने पर उन्हें चेतना में आसानी से लाया जाना सम्भव हो पाता है। यही कारण है कि इसे प्राप्य स्मृति भी कहा जाता है। अर्द्धचेतन की अंतर्वस्तु के दो स्रोत होते हैं–

(1) पहला स्रोत चेतन प्रत्यक्षण है। व्यक्ति जो कुछ भी प्रत्यक्षण करता है, वह थोड़ी देर के लिए चेतन में रहता है और बाद में जब व्यक्ति का ध्यान किसी दूसरी चीज पर जाता है, तो वह तुरंत ही अर्द्धचेतन में चला जाता है।

(2) दूसरा स्रोत अचेतन है। अचेतन की कुछ इच्छाएँ अर्द्धचेतन होते हुए चेतन में छद्म वेश अपनाकर प्रवेश करती हैं। ऐसे विचार या इच्छाएँ काफी आसानी से चेतना से बाहर हो जाते हैं, और अर्द्धचेतन की अवस्था में थोड़े समय के लिए बने होते हैं। फ्रायडिन मनोविश्लेषण में इस तरह से अर्द्धचेतन चेतन या अचेतन के बीच एक पुल का काम करता है।

फ्रायड के अनुसार चेतन मन का सबसे बड़ा हिस्सा होता है। इसमें वे सारे मानसिक तत्व होते हैं जो चेतन में नहीं आ पाते हैं या बड़ी कठिनाई से चेतन में आ पाते हैं। इसमें बाल्यावस्था की इच्छाएँ, लैंगिक इच्छाएँ तथा मानसिक संघर्ष आदि से सम्बन्धित इच्छाएँ होती हैं जिन्हें सामान्यतः व्यक्ति अपने दिन प्रतिदिन की जिन्दगी में पूरा नहीं कर पाता है। फ्रायड का मत था कि अचेतन की इच्छाओं का महत्व मानव व्यवहार के निर्धारण

में काफी है। उन्होंने यह बतलाया कि अचेतन की इच्छाएँ चेतन में विकृत रूप अपनाकर प्रवेश करती हैं। व्यक्ति अपने दिन प्रति दिन के जिन्दगी की जो भूलें करता है उसके पीछे अभिप्रेरणात्मक बल ही अचेतन की इच्छाएँ होती हैं।

2. संरचनात्मक मॉडल : उपाहं, अहं तथा पराहं

फ्रायड ने मन को संरचनात्मक दृष्टिकोण से अर्थात् विकासात्मक दृष्टिकोण से निम्नांकित तीन भागों में बाँटा है—उपाहं, अहं, तथा पराहं। पराहं व्यक्तित्व का जैविक तत्व होता है। यह ऐसी मानसिक एजेन्सी होता है जो जन्मजात होता है तथा व्यक्ति की शारीरिक संरचना से संबद्ध होता है। पराहं की इच्छाएं एवं आवेश असंगठित होते हैं तथा कोई नियम तथा काननू को नहीं मानने वाले होते हैं। पराहं अपनी इच्छाओं को तुरंत पूर्त्ति करना चाहता है तथा वह उसके परिणाम की चिन्ता कुछ भी नहीं करता है। इसे फ्रायड ने आनन्द नियम की संज्ञा दी है। इसका वास्तविकता से कोई संपर्क नहीं होता है। अतः यह समय बीतने या व्यक्ति की अनुभूतियों से परिवर्त्तित नहीं होता है। फ्रायड के अनुसार पराहं दो प्रक्रमों को अपना कर तनाव दूर करने की कोशिश करता है। वे दो प्रक्रम हैं—प्रतिवर्त्त क्रिया तथा प्राथमिक प्रक्रिया। प्रतिवर्त्त प्रक्रिया में प्राणी तनाव उत्पन्न करने वाले स्त्रोत के प्रति परांह स्वतः प्रतिक्रिया करता है और इस तरह से तनाव को दूर करता है। खाँसना, आँख मटकाना, छींकना आदि प्रतिवर्त्त क्रिया के कुछ उदाहरण हैं। प्राथमिक प्रक्रिया से तात्पर्य एक ऐसी प्रक्रिया से होता है जिसमें व्यक्ति तनाव दूर करने के लिए उस व्यक्ति या वस्तु की एक मानसिक प्रतिमा बना लेता है जिसका सम्बन्ध पहले मूल प्रणोदों की तुष्टि से था। इस प्रक्रिया में व्यक्ति वास्तविक तथा अवास्तविकता के बीच अंतर नहीं कर पाता है। एक शिशु पूर्णतः प्राथमिक प्रक्रिया के सहारे ही अपना तनाव दूर करता है।

जब शिशु कुछ बड़ा हो जाता है तो उसके पराहं की प्रवृत्तियों से ही अहं का विकास होता है। वह व्यक्ति के पूरे जीवनकाल तक वर्द्धित होते रहता है। अहं मनका वह भाग होता है जिसका सम्बन्ध वास्तविकता से होता है। यह वास्तविकता के नियमों द्वारा निर्धारित होती है जिसमें व्यक्ति सामाजिक वास्तवकिता को ध्यान में रखते हुए अपनी शारीरिक एवं मानसिक उर्जाओं का उपयोग करता है। यह नियम मूल प्रवृत्तिक तुष्टि की अनुमति तब देता है जब उसके लिए उपर्युक्त पर्यावरणी अवसर होते हैं। इस तरह से वास्तविकता के नियम का मूल उद्देश्य व्यक्तित्व में अखण्डता बनाये रखना होता है। चूँकि अहं का संबंध बाह्य वास्तविकता से होता है, अतः यह व्यक्तित्व का कार्य पालन या निर्णय लेने वाली शाखा होता है। चूँकि अहं अंशतः चेतन, अंशतः अचेतन तथा अंशतः अर्द्धचेतन होता है, अतः यह तीनों स्तर पर निर्णय लेने का कार्य करता है। अहं द्वारा मूलतः दो तरह के कार्य होते हैं—पहला, यह रक्षा प्रक्रमों के सहारे धमकी भरे आवेगों को चेतन में आने से रोकता है तथा इस तरह चिन्ता को कम करता है। दूसरा, यह परांह एवं बाह्य दुनिया के बीच उत्तम सम्पर्क बनाये रखता है।

पराहं व्यक्तित्व का नैतिक कमान्डर होता है। अहं के समान इसका कोई अपनी ऊर्जा नहीं होती है। इसका निर्धारण आदर्शवादी नियम द्वारा होता है। परांह इस अर्थ में अहं से भिन्न होता है कि इसका वास्तविकता से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। इसलिए यह जो पूर्णता की मांग करता है, वह पूर्णतः अवास्तविक होता है। फ्रायड ने पराहं के दो उपतंत्र बतलाये हैं—अन्तःकरण तथा अहं आदर्श। हालांकि फ्रायड ने इन दोनों के बीच अन्तर करने पर कम बल डाले हैं, इतना तो स्पष्ट है कि जब बच्चों को कोई व्यवहार करने पर दंड मिलता है, तो इससे उनमें अन्तःकरण विकसित होता है तथा जब उन्हें कोई व्यवहार करने के बाद पुरस्कार मिलता है, तो इससे उसमें अहं आदर्श विकसित होते हैं।

अन्त में फ्रायड ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि मन की इन तीनों शाखाओं अर्थात् उपाहं, अहं एवं परांह के बीच कोई तीखा अन्तर नहीं होता है। इन तीनों शाखाओं का विकास विभिन्न व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न होता

है। कुछ व्यक्तियों में पराहं अधिक विकसित होता है तथा कुछ व्यक्तियों में उपाहं अधिक विकसित होता है। एक सामान्य स्वस्थ व्यक्ति में उपाहं, अहं तथा पराहं तीनों ही काफी समन्वित होते हैं तथा एक-दूसरे के साथ मिलकर कार्य करते हैं।

3. मानसिक ऊर्जा तथा मूलप्रवृत्ति का सिद्धान्त

फ्रायड का मत था कि मानव जाति में एक जटिल ऊर्जा तंत्र होता है। उन्होंने दो तरह की ऊर्जा शक्ति का वर्णन किया है–दैहिक ऊर्जा तथा मानसिक ऊर्जा। दैहिक ऊर्जा की उत्पत्ति भोजन से होती है और इसका उपयोग शारीरिक क्रियाओं जैसे-सांस लेना, टहलना, दौड़ना, लिखना आदि में किया जाता है। मानसिक ऊर्जा की उत्पत्ति उत्तेजन के न्यूरो दैहिक अवस्था से होती है। उन्होंने यह भी मत जाहिर किया कि ये दोनों ऊर्जाएँ एक-दूसरे में परिवर्त्तित हो सकती हैं तथा इसका उपयोग मनोविज्ञान क्रियाओं जैसे, चिन्तन करने में किया जाता है। उपाहं ही वह बिन्दु है जो दैहिक ऊर्जा तथा मानसिक ऊर्जा के बीच मध्यस्थता करता है। फ्रायड का मत है कि प्रत्येक व्यक्ति में मानसिक ऊर्जा की मात्रा सीमित होती है और इसे व्यक्ति उन मानसिक क्रियाओं के करने में खर्च करता है जो विभिन्न तरह की आवश्यकताओं से उत्पन्न शारीरिक उत्तेजन को कम करने के लिए किया जाता है। इन शारीरिक उत्तेजनों या आवश्यकताओं की मनोवैज्ञानिक या मानसिक कल्पना या चित्रण को मूलप्रवृत्ति कहा जाता है। दूसरे शब्दों में किसी दैहिक आवश्यकता को पूरा करने के लिए जो इच्छा या मनोवैज्ञानिक कल्पना होता है, उसे मूल प्रवृत्ति कहा जाता है। जैसे–प्यास की मूल प्रवृत्ति शारीरिक कोशिकाओं में पानी की कमी से उत्पन्न होती है और पानी पीने की मानसिक इच्छा के रूप मे अभिव्यक्त होती है। अत: मूलप्रवृत्ति द्वारा मानसिक ऊर्जा की मात्रा का पता चलता है और सभी मूलप्रवृत्ति एक साथ मिलकर व्यक्तित्व की कुल उर्जा का निर्धारण करता है। संक्षेप में मूल प्रवृत्ति एक साथ मिलकर व्यक्तित्व की कुल ऊर्जा का निर्धारण करता है। संक्षेप में मूल प्रवृत्ति एक तरह का आन्तरिक प्रणोद होता है जो सतत अभिप्रेरणात्मक बल के रूप में किया जाता है। मूलप्रवृत्ति की उत्पत्ति तो पराहं से अवश्य होती है परन्तु उसका नियंत्रण अहं द्वारा होता है।

1920 के बाद के लेखन में फ्रायड ने मूल प्रवृत्ति के दो प्रकार बतलाये-जीवन मूलप्रवृत्ति तथा मृत्यु मूलप्रवृत्ति। जीवन मूल प्रवृत्ति को "इरोस" तथा मृत्यु मूलप्रवृत्ति को "बैनेटोस" भी कहा जाता है। जीवन मूलप्रवृत्ति में वे सारे बल होते हैं जो प्राणी की महत्वपूर्ण दैहिक प्रक्रियाओं को संयोजित करते हैं तथा प्रजातियों के प्रजनन को प्रोत्साहित करते हैं। इसमें यौन मूलप्रवृत्ति को फ्रायड द्वारा काफी अधिक महत्व दिया गया है। यौन मूलप्रवृत्ति की ऊर्जा को लिबिडो की संज्ञा दी गयी है। फ्रायड ने यौन मूलप्रवृत्ति पद का प्रयोग थोड़ा विस्तृत अर्थ में किये हैं। इससे उनका तात्पर्य न केवल जनांगी लैंगिक सुख से है बल्कि अन्य शारीरिक क्षेत्रों से उत्पन्न आनन्द से भी था। मृत्यु मूलप्रवृत्ति में वे सारे बल सम्मिलित होते हैं जिससे प्रेरित होकर व्यक्ति ध्वंसात्मक कार्य जैसे–आत्महत्या, दूसरों को जान से मार देना, आक्रमकता, निष्ठुरता आदि जैसे कार्य करता है। ऐसी मूलप्रवृत्ति का भी महत्व काफी है। फ्रायड का मत है कि मृत्यु मूलप्रवृत्ति का एक आनुभाविक आधार होता है क्योंकि प्रत्येक जीवित प्राणी में जीवहीनता की स्थिति में लौटने की प्रवृत्ति होती है। यही कारण है कि फ्रायड (1920) ने कहा है, "सभी जीवन का लक्ष्य मृत्यु होता है।"

व्यक्ति में जीवन मूलप्रवृत्ति तथा मूल्य मूलप्रवृत्ति दोनों ही एक-दूसरे के साथ अन्त:क्रिया करती हैं तथा वास्तविकता के नियम के निर्देश के अनुरूप कार्य करते हैं। ये दोनों मूलप्रवृत्तियाँ एक साथ मिलकर भी कार्य करती हैं। जैसे-खाने की क्रिया का ही उदाहरण ले लिया जाए। खाने की क्रिया प्राणी की जिन्दगी को संपोषित करती है लेकिन इसमें ध्वंसात्मक कार्य जैसे–काटना, चबाना, निगलना आदि भी सम्मिलित होते हैं। कभी-कभी जीवन मूलप्रवृत्ति मृत्यु मूलप्रवृत्ति को तटस्थ भी कर देती है। ये दोनों ही मूलप्रवृतियाँ कभी-कभी एक-दूसरे के प्रतिद्वन्द्वी भी हो जाती हैं जैसा कि हम उस परिस्थिति में पाते हैं जब एक ही व्यक्ति या वस्तु को कोई व्यक्ति प्यार करता है तथा घृणा भी करता है। कभी-कभी मृत्यु मूलप्रवृत्ति की प्रबलता अधिक बढ़ जाती है। जैसा कि

हम पाते हैं कि व्यक्ति कभी-कभी अपनी प्रिय वस्तु या व्यक्ति को काफी हानि पहुँचाता है।

4. दुश्चिंता एवं प्रतिरक्षा प्रक्रम

हालांकि फ्रायड ने दुश्चिंता को स्पष्टत: परिभाषित नहीं किया है, फिर भी उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि जब व्यक्ति के अहं को किसी तरह के खतरा से धमकी पहुँचती है तो इसमें दुश्चिंता उत्पन्न होती है। अत: फ्रायड के अनुसार दुश्चिंता एक ऐसी सांवेगिक दुखद अवस्था है जिसमें एक ऐसा दैहिक संवेदन होता है जो व्यक्ति को संभावित खतरे से सतर्क होने की सूचना देता है। उन्होंने दुश्चिंता के तीन प्रकार बतलाये हैं–

(1) वास्तविक दुश्चिंता–इसे वस्तुनिष्ठ दुश्चिंता कहा जाता है। यह एक ऐसी दुश्चिंता है जिसमें पर्यावरण में उपस्थित वास्तविक खतरा या धमकी के प्रति एक सांवेगिक अनुक्रिया होती है। दूसरे शब्दों में बाह्य दुनिया पर जब अहं की निर्भरता बढ़ जाती है तो इससे वास्तविक दुश्चिंता की उत्पत्ति होती है।

(2) तंत्रिकातापी दुश्चिंता–इसतरह की दुश्चिंता में अहं को उपाहं की प्रवृत्तियों द्वारा धमकी मिलती है। इसका मतलब यह हुआ कि जब अहं की निर्भरता उपाहं पर बढ़ जाती है, तो इससे तंत्रिकातापी दुश्चिंता की उत्पत्ति होती है।

(3) नैतिक दृश्चिंता–जब अहं को परांह से धमकी मिलती है, तो इससे व्यक्ति में नैतिक, दुश्चिंता उत्पन्न होती है। दूसरे शब्दों में, जब अहं की निर्भरता पराहं पर हो जाती है, इससे व्यक्ति में नैतिक दुश्चिंता उत्पन्न होती है। ऐसी दुश्चिंता से व्यक्ति में दोष भाव, आत्म आलोचना तथा लज्जा आदि तीव्र मात्रा में उत्पन्न हो जाती है।

फ्रायड ने कई रक्षा प्रक्रमों की चर्चा की है जिसमें निम्नांकित प्रमुख हैं–

(1) दमन–फ्रायड के अनुसार यह सबसे प्रमुख रक्षा प्रक्रम है। इस प्रक्रम में व्यक्ति अवांछित एवं कामुक इच्छाओं और भावनाओं को चेतन से हटाकर अचेतन में कर देता है। ऐसी दमित इच्छाओं के बारे में जानने के लिए फ्रायड ने स्वप्न, स्वतंत्र साहचर्य तथा सम्मोहन आदि विधियों को प्रस्तावित किया है।

(2) प्रतिक्रिया निर्माण–इस मनोरचना में व्यक्ति अपने अहं को किसी अप्रिय इच्छा तथा प्रेरणा से ठीक उस इच्छा एवं प्रेरणा के विपरीत इच्छा या प्रेरणा विकसित कर बचाता है। इनमें दो चरण सम्मिलित होते हैं। पहले चरण में व्यक्ति अपने अप्रिय एवं कष्टकर विचारों एवं इच्छाओं को अचेतन में दमन कर देता है तथा दूसरे चरण में वह इन दमित इच्छाओं एवं विचारों के ठीक विपरीत इच्छा चेतन स्तर पर व्यक्त कर अपने तनाव को दूर करता है। एक भ्रष्ट नेता द्वारा भ्रष्टाचार के विरोध में भाषण देना प्रतिक्रिया निर्माण के उदाहरण हैं।

(3) प्रतिगमन–प्रतिगमन का शाब्दिक अर्थ पीछे की ओर जाना होता है। जब कोई वयस्क अपनी इच्छाओं, प्रेरणाओं एवं व्यवहारों को बाल्यावस्था की इच्छाओं, प्रेरणाओं एवं व्यवहारों के अनुकूल बना लेता है, तो इसे प्रतिगमन की संज्ञा दी जाती है। एक वयस्क जब एक बच्चा के समान व्यवहार करने लगता है या बचकाना ढंग से अपनी इच्छाओं एवं प्रेरणाओं की अभिवक्ति करता है तो उसकी इन इच्छाओं से सम्बन्धित मानसिक चिन्ता तथा तनाव अपने आप थोड़ा कम हो जाता है।

(4) प्रक्षेपण–दूसरे लोगों या वातावरण के प्रति अपनी अमान्य प्रवृत्तियों, मनोवृत्तियों एवं व्यवहारों को अचेतन रूप में आरोपित करने की प्रक्रिया को प्रक्षेपण कहा जाता है। अत: प्रक्षेपण में व्यक्ति अपनी निकृष्ट, अनैतिक एवं घृणित प्रवृत्तियों तथा विचारों को दूसरों में देखता है।

(5) यौक्तिकीकरण–यौक्तिकीकरण में व्यक्ति अपने अयुक्तिसंगत व्यवहारों को एक युक्तिसंगत तर्कसंगत व्यवहार के रूप में परिणत करके अपने आप को संतुष्ट करता है तथा अपना मानसिक संघर्ष दूर करने

की कोशिश करता है। मशहूर कहावत अंगूर खट्टे हैं पर यौक्तिकीकरण का प्रक्रम आधारित है।

(6) उदात्तीकरण–इस प्रक्रम में व्यक्ति अपनी असंतुष्ट इच्छाओं की पूर्त्ति समाज द्वारा स्वीकृत लक्ष्यों या उद्देश्यों कें रूप में प्रतिस्थापित करके करता है। एक विवाहित महिला का बहुत दिनों तक संतानविहीन रहने पर एक बाल्य कल्याण केन्द्र खोलना उदात्तीकरण का उत्तम उदाहरण है।

(7) विस्थापन–इस रक्षा प्रक्रम में व्यक्ति अपने अहं को कष्टकर एवं अनैतिक इच्छाओं से उत्पन्न द्वन्द्वों एवं संघर्षों से बचाता है। माता-पिता द्वारा पिटाई होने पर बालक द्वारा अपने छोटे भाई या बहन को पीटना या झिटकना विस्थापन का एक अच्छा उदारहण है।

इसके अलावा भी कई रक्षा प्रक्रम है जिनका उपयोग कर अहं अपने आप को दुश्चिंता से बचाता है।

5. मनोलैंगिक विकास की अवस्थाएँ

फ्रायडियन मनोविश्लेषण का एक महत्वपूर्ण पूर्वकल्पना यह है कि शिशु में जन्म के समय यौन शक्ति जिसे विविडो कहा जाता है, उपस्थित रहती है तथा विभिन्न मनोलैंगिक अवस्थाओं से गुजरकर ऐसी शक्ति विकसित होती है। फ्रायड के अनुसार ऐसी अवस्थाएँ निम्नांकित पाँच हैं–

(1) मुख अवस्था–यह अवस्था जन्म से लेकर प्रथम दो सालों तक की होती है। फ्रायड के अनुसार यौन जन्म के समय भी उपस्थित रहता है। शायद यही कारण है कि बच्चे चूसने तथा भोजन करने की प्रक्रिया से आनन्दित होते हैं। इसे मुख्य रक्षात्मक अवधि कहा जाता है। जब बच्चों में दाँत निकल आते हैं, तो उन्हें काटने में आनन्द आता है। इसे मुख्य परपीड़नशील अवस्था कहा जाता है। मुखा-अवस्था में कामुकता क्षेत्र मुँह होता है।

(2) गुदावस्था–इस अवस्था में कामुकता क्षेत्र मुँह से हटकर शरीर के गुदा क्षेत्र में आ जाता है। यह अवस्था 2 साल से 3 साल की आयु के बीच की होती है। इस अवस्था में बच्चे मल-मूत्र त्यागने से संबंधित क्रियाओं से आनंद उठाते हैं। इसमें दो तरह की क्रियाएँ होती हैं–गुदा बहिष्कारक क्रियाएँ तथा गुदा धारणात्मक क्रियाएँ। गुदा बहिष्कार क्रिया में मल-मूत्र त्यागने में शिशु लैंगिक सुख प्राप्त करता है क्योंकि ऐसा करने से उसका शारीरिक तनाव दूर हो जाता है तथा उसे काफी आराम मिलता है। मल-मूत्र त्यागने से शिशु का श्लेष्मल झिल्ली काफी उत्तेजित हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप बच्चों में लैंगिक सुख की प्राप्ति होती है। गुदे धारणात्मक क्रिया में शिशु मल मूत्र को कुछ देर तक रोककर रखे रहता है जिससे उसके आंत तथा मूत्राशय के एक तरह का हल्का तनाव उत्पन्न होता है और उससे उसे आनन्द का अनुभव होता है। इन दोनों तरह की क्रियाओं से आगे चलकर दो अलग-अलग व्यक्तित्व शीलगुणों का निर्माण होता है।

(3) लिंग प्रधानावस्था या शिश्नावस्था–यह अवस्था चौथे से पाँचवें साल के दौरान उत्पन्न होती है और इसमें कामुकता क्षेत्र जननेन्द्रिय होती हैं। इस अवस्था में बच्चे अपनी जनेन्द्रिय को छूते हैं, मलते हैं तथा खींचते हैं। इनसे उनकी जनेन्द्रियों में संवेदन उत्पन्न होता है और उन्हें लैंगिक आनन्द की प्राप्ति होती है। इस अवस्था में लड़कों में मातृ-मनोग्रन्थि तथा लड़कियों में पितृ-मनोग्रन्थि का विकास होता है। मातृ-मनोग्रन्थि में लड़का अचेतन रूप से अपनी माँ से लैंगिक प्रेम तथा रति क्रिया की इच्छा करता है तथा पिता से घृणा करता है। लेकिन वह भी समझता है कि माँ के साथ उसका लैंगिक प्रेम पिता को कतई पसंद नहीं है और वे एक दिन गुस्साकर उसका शिश्न काट देंगे। इससे उसमें शिश्न काट देने की चिन्ता उत्पन्न हो जाती है जिसे फ्रायड ने बधिया होने की चिन्ता कहा है।

पितृ मनोग्रन्थि का विकास लड़कियों में होता है। यह एक ऐसी मनोग्रन्थि है जिसे लड़की पिता से लैंगिक सुख प्राप्त करना चाहती है तथा अपनी माँ से घृणा करती है। इस अवस्था में लड़कियों में शिश्न ईर्ष्या

भी उत्पन्न होती है जो लड़कों में उत्पन्न बधिया होने की चिन्ता का एक प्रतिरूप है। शिश्न ईर्ष्या में लड़की में इस बात से ईर्ष्या होती है कि उसके पास अपने भाइयों एवं पिता के समान शिश्न था परन्तु सजा के रूप में उसकी माँ उससे उसके शिश्न ही छीन लिया है। इससे स्वाभावत: वह माँ के प्रति अधिक विद्वेषी हो जाती है। शिश्न ईर्ष्या से लड़कियों में हीनता का भाव भी उत्पन्न होता है। इस अवस्था में उपर्युक्त मनोग्रन्थियों का ठीक से समाधान नहीं होने पर व्यक्तित्व विकास पर काफी गहरा प्रभाव पड़ता है।

(4) अव्यक्तितावस्था–यह अवस्था 6 या 7 साल से प्रारम्भ होकर 12 वर्ष की आयु तक की होती है। इस अवस्था में बच्चों में कोई नया कामुकता क्षेत्र विकसित नहीं होता है तथा साथ-ही-साथ लैंगिक इच्छाएँ भी सुषुप्त रहती हैं। इस अवस्था में बच्चों की लैंगिक ऊर्जा का उदात्तीकरण हो जाता है अर्थात् उसकी अभिव्यक्ति भिन्न-भिन्न प्रकार की अलैंगिक क्रियाओं जैसे--चित्रकारी, शिक्षा, खेल-कूद आदि के रूप में अभिव्यक्त होती हैं।

(5) जनेन्द्रियावस्था–मनोलैंगिक विकास की यह अन्तिम अवस्था है जो 13 वर्ष की आयु से प्रारम्भ होकर निरन्तर चलती रहती है। इस अवस्था के प्रारम्भ होते ही अनेक प्रकार के शारीरिक परिवर्त्तन होते हैं तथा ग्रन्थीय परिवक्वता आ जाती है। इस अवस्था के प्रारम्भ के कुछ वर्ष जो किशोरावस्था के वर्ष होते हैं, में व्यक्ति अपने ही लिंग के व्यक्तियों के साथ अधिक आकर्षित होता है। इसे समलिंग कामुकता कहा जाता है। फ्रायड का यह दावा है कि प्रारम्भिक किशोरावस्था में सभी व्यक्तियों में समलिंग कामुकता की प्रवृत्ति होती है। परन्तु धीरे-धीरे जैसे-जैसे व्यक्ति प्रारम्भिक किशोरावस्था से निकलकर वयस्कावस्था में प्रवेश करता है तो उसकी समलिंग कामुकता प्रवृत्ति कमने लगती है और इससे विपरीत यौन के व्यक्तियों के प्रति आकर्षण बढ़ने लगता है। इससे व्यक्ति में समलिंगी कामुकता की जगह पर विषमलिंग कामुकता विकसित होने लगती है जिसकी तुष्टि शादी विवाह करके करता है।

6. फ्रायड का समाज मनोविज्ञान

फ्रायड ने 1913 में "टोटेम एण्ड टैबू" नामक पुस्तक का प्रकाशन किया जिसमें समाज मनोविज्ञान के कुछ पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। इस पुस्तक में उन्होंने पुरातन व्यक्तियों तथा उनके धर्म की मनोविश्लेषणात्मक व्याख्या प्रस्तुत की है। पुरातन समय में पिता की पुत्र द्वारा हत्याएँ हो जाती थी। पूर्व ऐतिहासिक अवधि के इस तरह के परिवार को "प्रमल होर्ड" कहा जाता है। परिणामत: ऐसे घृणित कार्य तथा अन्य समाज कार्य जैसे, कौटुम्बिक व्यभिचार के प्रति लोगों में वर्जना विकसित हो गयी। इस तरह की वर्जनाओं से धीरे-धीरे नैतिकता तथा धर्म का विकास हुआ। परांह के विकास पर भी इस तरह के सामाजिक बलों का काफी प्रभाव पड़ता है।

7. मन-शरीर समस्या

फ्रायड ने मन-शरीर समस्या पर कोई खास प्रकाश नहीं डाला है। जोन्स ने (1953) यह स्पष्ट किये हैं कि कई ऐसे उदाहरण हैं जिनसे यह पता चलता है कि इस समस्या पर भी वे अपना विचार व्यक्त करना चाहते थे। इतिहासकारों ने उनके सम्प्रदाय को मनोवैज्ञानिक समान्तरवाद कहा है क्योंकि मानसिक प्रक्रियाएँ दैहिक प्रक्रियाओं की अनुपस्थिति में नहीं होती हैं तथा दैहिक प्रक्रियाएँ मानसिक प्रक्रियाओं के पहले होती हैं। लुंडिन (1985) ने फ्रायड को मनोदैहिक अन्त:क्रियावाद का समर्थक माना है। इसका आधार यह है कि फ्रायड ने उपाहं, अहं तथा पराहं तथा बाहरी वास्तविकता के साथ सतत अन्त:क्रिया पर बल डाला है।

यह स्पष्ट हुआ कि फ्रायाडियन मनोविश्लेषण एक काफी विस्तृत सम्प्रदाय है जिसका प्रभाव आधुनिक मनोविज्ञान पर काफी पड़ा है। इसके इस समग्र प्रभाव के कारण ही उसे मनोविज्ञान का "प्रथम बल" कहा गया है।

4.3 फ्रायडियन मनोविश्लेषण की आलोचनाएँ

फ्रायड द्वारा प्रतिपादित "मनोविश्लेषण" का सम्प्रदाय अपनी लोकप्रियता के कारण काफी चर्चित रहा है। इतना ही नहीं, इसका प्रभाव मनोविज्ञान की कुछ खास-खास शाखाओं जैसे–असामान्य मनोविज्ञान, नैदानिक

मनोविज्ञान के क्षेत्र में सर्वाधिक रहा है। इसके बावजूद इसकी कुछ आलोचनाएँ की गयी हैं जिनमें निम्नांकित प्रमुख हैं–

1. आँकड़ों का जांचनीय न होना–आलोचाकों का मत है कि फ्रायड ने अपने सिद्धान्तों एवं संप्रत्ययों का विकास लोगों के व्यक्तिगत प्रेक्षणों के आधार पर किया है। इसमें अधिकांशत: उनके अपने व्यवहार के विश्लेषण पर आधारित थे। इसके अलावा रोगियों द्वारा जोकुछ भी कहे गए, उस पर उन्होंने आँख मूंदकर विश्वास किये और अपने सिद्धान्त का उसे आधार बनाया। इन सभी तरह के प्रेक्षणों से जो आंकड़े उन्हें मिले उनका सत्यापन करना मुश्किल है। आलोचकों का यह भी मत है कि स्नायुविकृत लोगों के मानसिक संघर्ष, स्वप्न आदि के विश्लेषण से सामान्य व्यक्ति के मनोविज्ञान को समझना एक टेढ़ी खीर है। इसके तथ्यों को मात्र विश्वास पर स्वीकार किया जा सकता है, न कि प्रयोगात्मक सत्यापन के आधार पर।

2. असत्यापित सैद्धान्तिक संप्रत्यय–फ्रायड के सिद्धान्त एवं प्राक्कल्पनाओं के विशेष स्वरूप के कारण उनको सत्यापित करना तो मुश्किल है। फलत: उन्हें मात्र एक असत्यापित सैद्धान्तिक संप्रत्यय के रूप में ही स्वीकार करने की बाध्यता है। जैसे–पराहं तथा मानसिक ऊर्जा का संप्रत्यय ऐसा ही है जिसकी प्रयोगात्मक जाँच करके उनकी वैधता को स्वीकृत करना मुश्किल है।

3. कल्पित संप्रत्यय–कुछ आलोचकों का मत है कि फ्रायड जरूरत से ज्यादा पुराण विद्या पर निर्भर थे। इसका सबसे उत्तम उदाहरण उनके द्वारा प्रतिपादित मातृ मनोग्रंथि है। आलोचकों ने फ्रायड के इस दावे की हंसी उड़ायी है कि एक अपरिपक्व बालक के अचेतन में अपनी माँ से लैंगिक सम्बन्ध के जन्मजात विचार होते हैं। ऐसी हँसी उनके अन्य संप्रत्ययों जैसे–बधिया की चिन्ता, शिश्न ईर्ष्या, पितृ मनोग्रंथी आदि की भी उड़ायी गयी है। आलोचकों का मत है कि फ्रायड के ये सारे संप्रत्ययों का आधार कोई वैज्ञानिक तथ्य न होकर पौराणिक कथाएँ हैं जो सर्वथा असामान्य हैं।

4. परिमापण की कमी–यह आलोचना स्कीनर (1954) द्वारा की गयी है। स्कीनर का मत है कि फ्रायड ने किसी भी मानव व्यवहार के स्वरूप को कोई निश्चित आयाम नहीं बतलाया है। उन्होंने मात्र स्मृति, विचार आदि के बारे में बातचीत की है। इसकी किसी भी इकाई का वर्णन नहीं किया है जिसका सही-सही मापन किया जा सके। उनके कुछ संप्रत्यय जैसे लिबिडो या कैथेविर्सस ऐसे प्रमुख संप्रत्ययों में से है जिसे आयामहीन कहा जा सकता है। फलस्वरूप, उनका मापन सम्भव नहीं है। जब उन्हें मापना ही सम्भव नहीं है तो उसे आधार बनाकर किसी प्रकार का सामान्यीकरण करना अर्थहीन है।

5. मध्यवर्त्ती चर–यह भी आलोचना स्कीनर द्वारा ही की गयी है। स्कीनर का मत है कि फ्रायड मानव व्यवहारों की व्याख्या करने के लिए मध्यवर्त्ती चरों की ओर जरूर झुके परन्तु उनके मौलिक कारणों की उपेक्षा करके। जैसे–फ्रायड की व्याख्या के अनुसार व्यक्ति में दोष भाव का कारण पराहं (जो स्वभावत: एक मध्यवर्त्ती चर है।) का दंड होता है। ऐसा भी तभी हो सकता है जब कि व्यक्तियों में दोष भाव का कारण बाल्यावस्था में दुश्चिंता से अत्यधिक अनुबंधन हो जिसका कभी भी विलोपन नहीं हुआ हो।

6. यौन पर अत्यधिक बल देना–फ्रायड की आलोचना इसलिए भी की गयी है कि उन्होंने मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तों में जरूरत से ज्यादा लैंगिक सम्बन्धों के ऊपर बल डाला है। फ्रायड का यह दावा कि लैंगिक इच्छाएँ शिशुओं में जन्म से ही मौजूद रहती हैं, की आलोचना कई लोगों द्वारा की गयी है।

इन आलोचनाओं के बावजूद फ्रायड के मनोविश्लेषण संप्रदाय का योगदान महत्वूपर्ण रहा है। आज के मनोवैज्ञानिक विशेषकर नैदानिक मनोविज्ञान तथा व्यक्ति के मनोविज्ञान के मनोविज्ञानी उनके योगदानों के प्रति काफी आभारित हैं और उनके कई संप्रत्यय एवं सिद्धान्त आधुनिक चिन्तन के प्रमुख स्त्रोत हैं।

4.4 एडलर का वैयक्तिक मनोविज्ञान का योगदान (Contributions of Addler's Individual Psychology)

एडलर फ्रायड के विरोधी थे। एडलर के मनोविज्ञान जिसे वैयक्तिक मनोविज्ञान कहा जाता है, की कई महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं। पहली, उनका मनोविज्ञान एक सामान्यबोधक मनोविज्ञान के समान था जिसे समझना काफी आसान है। दूसरी, उनका मनोविज्ञान काफी आशावादी था। उसने मानव व्यवहार की व्याख्या में हमेशा एक वास्तविक दृष्टिकोण को अपनाया। एडलर के योगदानों को निम्नांकित सात शीर्षकों में बांटकर प्रस्तुत किया जा सकता है–

1. आंगिक हीनता तथा क्षतिपूर्त्ति–एडलर का मत है कि जिन व्यक्तियों में कुछ आंगिक हीनता जैसे–दृष्टि की कमजोरी, सुनने की कमजोरी आदि होती हैं, वे अन्य क्षेत्रों में श्रेष्ठता स्थापित करके इस कमी की क्षतिपूर्त्ति करने की कोशिश करते हैं। इसमें महत्वूपर्ण बात यह होती है कि व्यक्ति ने अपने आप के प्रति किस तरह की मनोवृत्ति विकसित की है। वह अपनी हीनता की क्षतिपूर्त्ति के लिए सक्रिय प्रयास कर करता है या मात्र रक्षात्मक उपायों को अपनाकर अपने आप को संतुष्ट कर ले सकता है। एडलर ने यह स्पष्ट किया कि वह हीनता का भाव ही है (न कि आंगिक दोष) जिससे पर्याप्त क्षतिपूर्त्ति की प्रेरणा व्यक्ति को मिलती है।

2. सफलता तथा श्रेष्ठता का प्रयास–सफलता की पूर्णता की कोशिश से एडलर का तात्पर्य पूर्णता की प्राप्ति की ओर बढ़ने की मौलिक प्रेरणा से होता है। एडलर ने इसकी चार विशेषताओं का उल्लेख किया है, जो इस प्रकार हैं–

1. सफलता की कोशिश अभिप्रेरण जन्मजात होता है और जन्म के समय ही शिशुओं में मौजूद रहता है।
2. हालांकि सफलता की कोशिश अभिप्रेरण जन्मजात होता है तथा जन्म के समय मौजूद होता है, इसका विकास बाद में होता है। जन्म के समय यह मात्र एक अन्त:शक्ति के रूपमें उपस्थित रहता है।
3. सफलता की कोशिश कई अभिप्रेरकों का एक सम्मिश्रण नहीं है बल्कि यह एक अकेला अभिप्रेरक है जो जन्म से प्रणोदनों को निर्धारित भी करता है।
4. सफलता की कोशिश एक सर्वसार्विक प्रणोद जो सामान्य एवं स्नायुविकृत दोनों तरह के व्यक्तियों में पाया जाता है।

3. सामाजिक अभिरुचि–एडलर की सामाजिक अभिरुचि से तात्पर्य सामान्य रूप से मानवता के कल्याण की मनोवृत्ति तथा साथ-ही-साथ दूसरों के प्रति परानुभूति दिखलाने की इच्छा से होता है। यह पूरी, जिन्दगी के दौरान व्यक्ति के व्यवहार को निर्देशित करती है। सफलता की कोशिश के अभिप्रेरण के समान ही सामाजिक अभिरुचि नि:संदेह जन्मजात होती है परन्तु इसे बाद में विकसित किया जाता है क्योंकि जन्म के समय यह एक अन्त:शक्ति के रूप में मौजूद होती है।

4. जीवन शैली–एडलर के योगदान में जीवन शैली एक महत्वपूर्ण संप्रत्यय है। जीवन शैली से तात्पर्य किसी लक्ष्य पर पहुँचने का व्यक्ति का अपूर्व तरीका एवं उसके आत्म-संप्रत्यय तथा दूसरों के प्रति विकसित मनोवृत्ति आदि से होता है। जीवन शैली कई कारकों जैसे–आनुवंशिकता, पर्यावरण, सामाजिक अभिरुचि, सफलता के लक्ष्य आदि से प्रभावित होती है। एडलर ने जीवन शैली को एक प्रमुख नियंत्रण बल माना है। अत: यह फ्रायड द्वारा प्रतिपादित संप्रत्यय अहं का तुल्य संप्रत्यय है।

एडलर ने चार तरह की जीवन शैली मनोवृत्ति का वर्णन किया है, जो निम्नांकित हैं–

1. अधिकार दिखाने वाले प्रकार–ऐसे व्यक्ति दूसरों पर प्रभुत्व दिखाते हैं तथा इनमें सामाजिक अभिरुचि की कमी पायी जाती है।

2. प्राप्त करने वाले प्रकार–ऐसे लोग दूसरों से जितना अधिक-से-अधिक हो सकता है, प्राप्त करने की कोशिश करते हैं। ऐसे लोग जरूरत से ज्यादा दूसरों पर निर्भर करते हैं। परिस्थिति अत्यधिक तनावपूर्ण होने पर ऐसे लोग स्नायुविकृत हो जाते हैं। ऐसे लोगों में सामाजिक अभिरुचि की कमी पायी जाती है।

3. दूर हट जाने वाले प्रकार–ऐसे लोगों में सामान्य परिहार तथा परिस्थिति से हट जाने की प्रवृत्ति अधिक होती है। ऐसे लोगों में सामाजिक अभिरुचि की पर्याप्त कमी पायी जाती है।

4. सामाजिक रूप से उपयोगी प्रकार–ऐसे लोग वैसे व्यवहार अधिक करते हैं जो समाजिक रूप से उपयोगी होते हैं। ऐसे लोगों में सामाजिक अभिरुचि अधिक होती है। ऐसे व्यक्ति अधिक सक्रिय होते हैं तथा उनकी सामाजिक जिन्दगी में जिन्दादिली अधिक होती है। ऐसे लोग किसी भी सामाजिक समस्या का समाधान आम लोगों के सहयोग से करते हैं।

5. सर्जनात्मक शक्ति–सर्जनात्मक शक्ति व्यक्ति के जीवन शैली को बहुत हद तक विकसित करने में मदद करती है। एडलर का मत है कि प्रत्येक व्यक्ति में अपनी जीवन शैली का निर्माण करने की स्वतंत्रता होती है अत: व्यक्ति जो आज है, उसके लिए वह स्वयं ही उत्तरदायी होता है। सर्जनात्मक शक्ति से सामाजिक अभिरुचि का विकास होता है तथा लक्ष्य पर पहुँचने की विधि का निर्धारण होता है। इससे कुछ विशेष संज्ञानात्मक क्षमताएँ जैसे–प्रत्यक्षण, स्मृति, स्वप्न, कल्पनाचित आदि का भी निर्धारण होता है। एडलर ने सर्जनात्मक शक्ति को एक गत्यात्मक संप्रत्यय माना है क्योंकि इससे लक्ष्य की ओर एक स्वतंत्र गति की झलक मिलती है।

6. कल्पित सोद्देश्यता–एडलर का मत था कि व्यक्ति आत्मनिष्ठ प्रत्यक्षण से बाह्य कारकों की अपेक्षा अधिक अभिप्रेरित होता है। आत्मनिष्ठ प्रत्क्षण के कई पहलुओं में से एक महत्वूपर्ण पहले भविष्य के बारे में प्रत्याशा या कल्पना है।

7. जन्म क्रम–एडलर की अति महत्त्वपूर्ण योगदान मानव व्यवहार एवं शीलगुणों के विकास पर जन्म क्रम के पड़ने वाले प्रभाव हैं। इन्होंने चार प्रकार के जन्मक्रम का अध्ययन किया है–प्रथम, द्वितीय, अन्तिम तथा अकेला बच्चा। उनका मत है कि प्रथम जन्म क्रम वाले बच्चे माता-पिता का अविभाजित ध्यान तथा स्नेह पहले पाते हैं। परन्तु बाद में उन्हें कटु अनुभूतियों का सामना करना पड़ता है क्योंकि माता-पिता का वही स्नेह एवं ध्यान अब दूसरे बच्चे पर चला जाता है। इससे प्रथम जन्मक्रम वाले बच्चों में अपने दूसरे भाई या बहन के प्रति अधिक घृणा एवं विद्वेष का भाव उत्पन्न हो जाता है। ऐसे बच्चों में दुश्चिंता तथा अति सुरक्षात्मक प्रवृत्तियाँ विकसित हो जाती हैं। दूसरे जन्मक्रम वाले बच्चे उससे अच्छी परिस्थिति में अपनी जिन्दगी प्रारम्भ करते हैं। ऐसे बच्चों की सामाजिक अभिरुचि अधिक विस्तृत होती है तथा सहयोग एवं प्रतिस्पर्धा की भावना तीव्र होती है। एडलर के अनुसार दूसरे जन्म क्रम वाले बच्चे उपलब्धि उन्मुखी होते हैं। अन्तिम जन्म क्रम वाले बच्चे की स्थिति थोड़ा अपूर्व होती है। एडलर का मत है कि ऐसे बच्चों को आगे चलकर समस्या बालक होने की सम्भावना तीव्र होती है।

स्पष्ट हुआ कि एडलर के वैयक्तिक मनोविज्ञान द्वारा कई क्षेत्रों में महत्त्वूपर्ण योगदान किये गए तथा इनके योगदानों का विश्लेषण करने से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि मानव व्यवहार के निर्धारक के रूप में एडलर ने सामाजिक कारकों के महत्व को स्वीकारा है।

4.5 एडलर के वैयक्तिक मनोविज्ञान की आलोचना

यद्यपि एडलर के वैयक्तिक मनोविज्ञान का महत्व काफी है तथा इसका प्रभाव मनोविज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों पर सार्थक रूप से पड़ा है, फिर भी इसकी आलोचनाएँ की गयी हैं, जिनमें निम्नांकित प्रमुख हैं–

(1) फ्रायड के समान एडलर के भी मनोविज्ञान में कई अजांचनीय संप्रत्यय हैं। सर्जनात्मक शक्ति तथा कल्पित सोद्देश्यता के संप्रत्यय इसके उदाहरण हैं। आलोचकों का मत है कि ऐसे संप्रत्यय से कोई अर्थपूर्ण निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है।

(2) वैयक्तिक मनोविज्ञान के बहुत सारे संप्रत्यय तथा पद ऐसे हैं जिसकी सही-सही सक्रियात्मक परिभाषा दिया जाना सम्भव नहीं है। जीवन शैली, सामाजिक अभिरुचि, श्रेष्ठता का प्रयास तथा सर्जनात्मक शक्ति कुछ ऐसे ही संप्रत्यय के उदाहरण हैं जिनकी सक्रियात्मक परिभाषा देना संभव नहीं है। आलोचकों का मत है कि एडलर की सर्जनात्मक शक्ति का संप्रत्यय काफी विभ्रमात्मक है। फलस्वरूप इन सबों के आधार पर किसी निष्कर्ष पर पहुँचना संभव नहीं है।

(3) फिस्ट (1985) का मत है कि एडलर द्वारा प्रतिपादित जन्म क्रम के संप्रत्यय को वैज्ञानिक रूप से अध्ययन करना संभव नहीं है। व्यक्ति के विभिन्न जन्म क्रमों के साथ व्यक्तित्व शीलगुणों को सहसंबंधित करना कठिन है। सच्चाई यह है कि जन्म क्रम तथा व्यक्तित्व शीलगुणों के बीच कोई संगत सामान्यीकरण करना संभव नहीं है। जैसे–द्वितीय जन्म क्रम वाले बच्चे अपनी बाल्यावस्था की परिस्थितियों को प्रथम जन्म क्रम तथा अन्तिम जन्म क्रम वाले बच्चे के समान ही समझ सकते हैं। ऐसी परिस्थिति में यह निश्चियपूर्वक नहीं कहा जा सकता है कि उसमें किस तरह का शीलगुण विकसित होगा।

4.6 फ्रायड तथा एडलर के बीच अन्तर

फ्रायड के मनोविश्लेषण तथा एडलर के वैयक्तित्व मनोविज्ञान के बीच कुछ स्पष्ट अन्तर है। ऐसे प्रमुख अंतर निम्नांकित हैं–

(1) फ्रायड के मनोविश्लेषण के मनुष्यों के जैविक स्वरूप पर अधिक बल डाला गया है। मानव के प्रत्येक व्यवहार की व्याख्या जैविक कारकों पर बल देकर करने की कोशिश की है। दूसरी तरफ, एडलर ने मनुष्य की सामाजिक प्रकृति पर बल डालकर मानव व्यवहार की व्याख्या की है। एडलर ने सामाजिक कारकों को व्यवहार का मुख्य निर्धारक माना है। इतिहासकारों ने एडलर को प्रथम सामाजिक विश्लेषज्ञ कहा है जिन्होंने ऐसा बल अपने मनोविज्ञान में दिया है।

(2) फ्रायड का दृष्टिकोण एक नियतिवादी का था क्योंकि इन्होंने वर्त्तमान व्यवहार का निर्धारक के रूप में गत अनुभूतियों को माना है। दूसरी तरह, एडलर एक सोद्देश्यवादी हैं जो भविष्य के लक्ष्यों को वर्त्तमान व्यवहार का निर्धारक मानते हैं। एडलर ने अपने मनोविज्ञान में प्रारंभिक घटनाओं तथा गत अनुभूतियों को व्यवहार के निर्धारक के रूप में मान्यता नहीं दी है। इसका मात्र एक अपवाद उनके मनोविज्ञान में जन्म क्रम को मानव शीलगुणों का निर्धारक मानना है।

(3) फ्रायड ने यौन एवं संबंधित क्रियाओं पर जरूरत से ज्यादा बल डाला है। फ्रायड ने यौन प्रणोद को मनुष्यों का सबसे महत्वपूर्ण प्रणोद माना है। एडलर ने फ्रायड की इस स्थिति की सराहना नहीं की है तथा अपने आरम्भिक लेखन में आक्रामकता तथा शक्ति के प्रयास को ही मनुष्य का सबसे प्रबल प्रणोद माना है। बाद में शक्ति के प्रयास की जगह पर श्रेष्ठता की कोशिश तथा अन्त में सामाजिक अभिरुचि के संप्रत्यय को मानव व्यवहार का मनुष्य मुख्य निर्धारक समझा गया।

(4) फ्रायड के लिए अचेतन मन का सबसे प्रमुख भाग है क्योंकि यह मानव व्यवहार का महत्वपूर्ण निर्धारक है। दूसरी तरफ़ एडलर ने अचेतन की अपेक्षा चेतन पर अधिक बल डाला है। उन्होंने यह कहा कि जो अचेतन में होता है वह चेतन में आ जाता है और वर्त्तमान व्यवहार का मुख्य निर्धारक बन जाता है। इस तरह से एडलर ने अचेतन को अस्वीकृत नहीं किया परन्तु निश्चित रूप से उसके महत्व को कम कर दिया।

(5) एडलर के वैयक्तिक मनोविज्ञान में व्यक्ति की अपूर्वता तथा अविभाज्यता पर अधिक बल डाला गया है। वे व्यक्तित्व को एक समग्र रूप से अध्ययन करने पर बल डालते हैं। वे व्यक्तित्व को एक अपूर्व तन्त्र कहते हैं जिसे उपतन्त्रों में बाँटना सम्भव नहीं है। एडलर का मत है कि प्रत्येक व्यक्ति की एक अपूर्व जीवन शैली होता है जो उसके द्वारा किये गये सभी तरह के व्यवहारों को समन्वित करती है। फ्रायड के मनोविश्लेषण में व्यक्ति पर इस तरह के बल की सर्वदा कमी पायी गयी है।

इस तरह से हम पाते हैं कि एडलर का मनोविज्ञान फ्रायड के मनोविज्ञान से कई अर्थों मे भिन्न है। इन विभिन्नताओं के कारण ही एडलर ने फ्रायड से अपना संबंध विच्छेद कर लिया था।

4.7 युंग के विलश्षेणात्मक मनोविज्ञान का योगदान (Contributions of Uung's Analytical Psychology)

युंग फ्रायड के दूसरे प्रमुख विरोधी थे जिन्होंने उनसे अलग होकर अपना एक अलग मनोविज्ञान स्थापित किये जिसे विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान के नाम से जाना जाता है। उन्होंने अपने इस मनोविज्ञान में फ्रायड के कई संप्रत्ययों को स्वीकार किये परन्तु कई अन्य संप्रत्ययों को इस आधार पर अस्वीकृत कर दिये कि उनमें यौन पर जरूरत से ज्यादा बल डाला गया है। युंग के विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान के प्रमुख योगदानों को निम्नांकित चार प्रमुख भागों मे व्यक्त किया जा सकता है–

1. चेतन एवं अचेतन–फ्रायड के समान युंग ने भी मानसिक संरचना के दो भाग बतलाये हैं–चेतन एवं अचेतन। कोई भी मानसिक घटना जिसका अनुभव अहं द्वारा होता है, उसे चेतन की संज्ञा दी जाती है तथा कोई भी मानसिक घटना जिसका अनुभव अहं को नहीं होता है उसे अचेतन में रखा जाता है। अतः युंग के लिए अहं का तादात्म्य मन के चेतन पहलू से होता है। युंग ने अहं को आत्मन् से भिन्न माना है क्योंकि आत्मन् का तादात्म्य चेतन तथा अचेतन दोनों पहलुओं से होता है। अतः आत्मन का सम्पर्क समग्र व्यक्तित्व से है जबकि अहं का सम्बन्ध मात्र मन के चेतन पहलू से होता है।

अचेतन मन का वह पहलू होता है जिसका सम्बन्ध अहं से नहीं होता है। इसमें सभी तरह की दमित चेतन इच्छाएँ एवं प्रतिमाएँ होती हैं तथा साथ ही साथ इसमें वे सारे मानसिक घटनाएँ भी होती हैं जो कभी चेतन में नहीं थीं। युंग के लिए अचेतन अधिक महत्वपूर्ण है। शायद यही कारण है कि वे इसे फ्रायड की तुलना में अधिक बल डालते हैं। उन्होंने अचेतन में बाल्यावस्था की दमित इच्छाएँ, भूली बिसरी यादें आदि संचित होती हैं। इसे व्यक्तिगत इसलिए कहा जाता है क्योंकि एक ही समय में विभिन्न व्यक्तियों में यह भिन्न-भिन्न होता है तथा स्वयं व्यक्ति के लिए भी अपूर्व होता है। व्यक्तिगत अचेतन के अंतर्वस्तु को मनोग्रन्थि या भावग्रन्थि कहा जाता है।

सामूहिक अचेतन युंग का सबसे महत्वपूर्ण परन्तु विवादास्पद सम्प्रत्यय है। इसमें आदिकालीन प्रतिमाएँ होती हैं तथा इसमें वैसी यादें होती हैं जो बहुत पुराने समय से पीढ़ी-दर-पीढ़ी से चली आती हैं। व्यक्ति के पूर्वजों द्वारा पृथ्वी, सूर्य, ईश्वर के संप्रत्यय से प्राप्त होनेवाली अनुभूतियाँ इसमें संचित होती हैं। सामूहिक अचेतन की अंतर्वस्तु को आद्यरूप कहा जाता है। यह व्यक्तिगत अचेतन की मनोग्रन्थियों से इस अर्थ में भिन्न होता है कि यह सामान्यीकृत होता है जबकि मनोग्रन्थि वैयक्तिकृत होती है। समानता यह है कि आद्यरूप में मनोग्रन्थियों के समान ही सांवेगिक तत्व होते हैं। युंग ने पाँच प्रमुख तरह के आद्यरूप का वर्णन किया है–परसोना, एनिमा, एनिमस, छाया तथा आत्मन। परसोना एक तरह के बाहरी व्यक्तित्व को कहा जाता है जिसे आम लोग देखते हैं, तथा समझते हैं। इससे व्यक्ति के उस रूप का पता चलता है जिसे वह लोगों के सामने रखना चाहता है।

फ्रायड के समान युंग का यह विचार था कि सभी मानव प्राणी उभयलिंगी होते हैं तथा उनमें स्त्रैण एवं पौरुष दोनों गुण होते हैं। पुरुष को स्त्रैण पहलू को एनिमा तथा स्त्री के पौरुष पहलू को एनिमस कहा जाता है।

2. मनोवृत्ति एवं कार्य–युंग का मत है कि व्यक्तित्व के दो पहलू होते हैं जो चेतन तथा अचेतन दोनों ही स्तरों पर कार्य करते हैं। वे हैं–मनोवृत्ति तथा कार्य। उन्होंने मनोवृत्ति के दो प्रकार बतलाये हैं–अन्तर्मुखता तथा बहिर्मुखता। अन्तर्मुखता की मनोवृत्ति रखने वाले व्यक्ति का ध्यान अपनी निजी अनुभूतियों पर अधिक होता है तथा वे उसी से निदेशित होते हैं। ऐसे लोग आत्मकेन्द्रित, शुष्क एवं अल्पभाषी होते हैं। जिन व्यक्तियों की मनोवृत्ति बर्हिमुखता की होती है, वे बाहरी अनुभूतियों एवं क्रियाओं पर निजी अनुभूतियों की तुलना में अधिक ध्यान देते हैं। ऐसे लोग सक्रिय एवं सामाजिक होते हैं। स्पष्ट हुआ कि ये दोनों तरह की मनोवृत्ति एक-दूसरे के विपरीत होती हैं तथा उनमें से किसी एक का व्यक्तित्व पर प्रभुत्व होता है तथा दूसरा दमित एवं अचेतन में होता है। कार्य के चार प्रकार होते हैं–चिन्तन, भाव, ज्ञान तथा अन्तर्ज्ञान। चिन्तन में व्यक्ति विभिन्न विचारों को आपस में सम्बन्धित करता है ताकि वह किसी समस्या का उत्तम ढंग से समाधान कर सके तथा संसार को ठीक ढंग से समझ सके। इस तरह चिन्तन एक तरह का बौद्धिक कार्य है। भाव में व्यक्ति में सुख, दुख, दर्द, क्रोध आदि से सम्बन्धित आत्मनिष्ठ अनुभूतियाँ उत्पन्न होती हैं। अतः इसके द्वारा मूल्यांकन संबंधी कार्य किये जाते हैं। ज्ञान कार्य में व्यक्ति को अपने तथा वातावरण की वस्तुओं, घटनाओं का प्रत्यक्षण होता है। अन्तर्ज्ञान कार्य में व्यक्ति को अचेतन प्रत्यक्षण या अचेतन प्रत्यक्षण होता है। ज्ञान तथा अर्न्तज्ञान के कार्य चूँकि मूल्यांकन से सम्बन्धित नहीं है, इसलिए इसे अविवेकी कार्य भी कहा जाता है।

3. मानसिक ऊर्जा–फ्रायड के समान युंग का भी मत था कि मानसिक ऊर्जा एक ऐसी ऊर्जा होती है जिसे नष्ट नहीं किया जा सकता है। हमारा व्यक्तित्व संरचना का मानसिक ऊर्जा का एक महत्त्वपूर्ण अंश है। मानसिक ऊर्जा का स्वरूप कुछ ऐसा होता है कि इसे दमित किया जा सकता है, विस्थापित हो सकता है तथा परिशुद्ध किया जा सकता है। उन्होंने दो नियमों का उल्लेख किया है जिनमें मानसिक ऊर्जा नियन्त्रित होती है–तुल्यता का नियम तथा इण्ट्रोपी का नियम। तुल्यता का नियम जो उष्मा गतिकी का प्रथम नियम है, यह बतलाता है कि ऊर्जा के रूप में भले परिवर्त्तन हो जाता है परन्तु वह नष्ट नहीं होता है। मानसिक ऊर्जा का स्वरूप भी ठीक इस नियम से नियंत्रित होता है। इसका एक उदाहरण इस प्रकार किया जा सकता है-मान लिया जाए कि कोई विद्यार्थी पढ़ाई-लिखाई की ओर ध्यान न देकर घूमने फिरने में एवं दोस्तों के साथ आतिशबाजी में अधिक ध्यान देता है। इसका मतलब तब यह हुआ कि शैक्षिक क्रियाओं में संलग्न ऊर्जा घूमने फिरने एवं आतिशबाजी के कार्यों में परिणत हो गयी। इण्ट्रोपी का नियम (जो ऊष्मा गतिकी का द्वितीय नियम है) यह बतलाता है कि जब दो चीजें एक साथ रखी जाती हैं तो उच्चतर चार्ज या आवेश वाली चीज से ऊर्जा निकलकर निम्न चार्ज या आवेश वाले चीज की ओर तब तक जाते रहती है जब तक कि इन दोनों की ऊर्जा शक्ति सम या बराबर नहीं हो जाए। इस नियम को व्यक्तित्व संरचना पर लागू करते हुए युंग ने यह कहा कि व्यक्तित्व के विभिन्न तंत्रों में ऊर्जा आवेशों के बीच एक संतुलन पाया जाता है। इस संतुलन के कारण व्यक्तित्व के कार्यों में संतुलन आता है तथा व्यक्ति एक विशेष मनोवृत्ति भी विकसित कर लेता है। यही कारण है कि इसे ऊर्जा नियमों की समता कहा जाता है। इण्ट्रोपी के नियम का एक उत्तम उदाहरण बहिर्मुखता तथा अन्तर्मुखता की परस्पर विरोधी मनोवृत्तियों में पाया जाता है। प्रारम्भ में ऐसी परस्पर विरोधी मनोवृतियों से व्यक्ति में तनाव होता है। अगर इन दोनों तरह की मनोवृत्तियों की शक्ति लगभग समान है, तो कहीं बीच में एक नयी मनोवृत्ति का जन्म होता है और धीरे-धीरे यह स्थिर हो जाती है।

4. व्यक्तित्व विकास–युंग से यह स्पष्ट हुआ कि व्यक्तित्व विकास कई अवस्थाओं के क्रम में गुजरता हुआ वैयक्तिकता के बिन्दु पर पहुँच कर समाप्त होता है। उन्होंने व्यक्तित्व विकास की चार अवस्थाओं का वर्णन किया है–बाल्यावस्था, तरुणाई मध्यावस्था, वृद्धावस्था। युंग व्यक्तित्व के दूसरे भाग जो मध्यावस्था से अर्थात्

35-40 वर्ष की आयु से प्रारम्भ होता है, को अधिक महत्वूपर्ण बतलाये हैं। इस अवस्था में व्यक्ति को व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं के एक साथ समन्वित करने का पर्याप्त मौका मिलता है और इससे आत्मन् के विकास या सिद्धि में पर्याप्त मदद मिलती है। अतः युंग ने आत्मन् सिद्धि को व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य माना है। परन्तु उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि व्यक्ति में स्नायु विकृत प्रवृत्तियाँ भी उस समय मौजूद रहती हैं और व्यक्ति का व्यवहार बहुत हद तक विभिन्न कारकों या बलों के बीच एक सन्तुलन बनाये रखने की क्षमता या सामर्थ्य पर निर्भर करता है।

व्यक्तित्व विकास की व्याख्या करने में युंग ने दो पदों का प्रयोग किया है—वैयक्तिकता तथा अनुभवातीत कार्य। वैयक्तिकता में विश्लेषणात्मक प्रक्रियाएँ जैसे व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को एक-दूसरे से अलग करना तथा उसे विस्तृत करना आदि सम्मिलित होता है। अनुभवातीत कार्य में सांश्लेषिक प्रक्रियाएँ जैसे अचेतन को चेतन सामग्रियों के साथ समन्वित करना, व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को समन्वित करना आदि सम्मिलित होती हैं। एक स्वस्थ स्वयं व्यक्तित्व विकास में इन दोनों तरह की प्रक्रियाएँ घुली मिली होती हैं।

स्पष्ट हुआ कि फ्रायड के समान युंग ने भी मनोविज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान किये हैं। उनके द्वारा प्रतिपादित जो आत्म-सिद्धि का सम्प्रत्यय है, वह बाद के मनोविज्ञानियों जैसे-मैंसलो, ऑलपोर्ट तथा मर्फी आदि के लिए महत्वपूर्ण प्रेरणा स्त्रोत रहता है। उसी तरह से युंग का शब्द साहचर्य परीक्षण को कई तरह के आधुनिक मनोवैज्ञानिक शोधों का प्रेरणा स्त्रोत माना गया है।

4.8 युंग के योगदानों की आलोचना

यद्यपि युंग का योगदान मनोविज्ञान के लिए काफी महत्वपूर्ण है, फिर आलोचकों ने उन्हें अछूता नहीं छोड़ा है। प्रमुख आलोचनाएँ निम्नांकित हैं-

(1) यद्यपि युंग को कुछ लोगों ने मनोविज्ञान के क्षेत्र में नया सम्प्रत्ययों के प्रतिपादन के लिए सराहा है, फिर भी कुछ लोगों ने इन सम्प्रत्यों की तीव्र भर्त्सना की हैं। सामूहिक अचेतन का सम्प्रत्यय एक ऐसा ही सम्प्रत्यय है। आलोचकों का मत है कि सामूहिक अचेतन का कोई शोध मूल्य नहीं है क्योंकि इस सम्प्रत्यय द्वारा कोई जाँचनीय प्राक्कल्पनाओं की निष्पत्ति नहीं की जा सकी है।

(2) एडवार्ड ग्लोभर (1950) ने युंग द्वारा प्रतिपादित आद्यरूप के सम्प्रत्यय की इस बिन्दु पर भी आलोचना की है कि वे काफी आत्मनिष्ठ हैं तथा उनकी व्याख्या व्यक्तिगत अनुभूति के रूप में की जा सकती है। ऐसे सम्प्रत्ययों की वैधता को आनुभाविक सबूतों पर परखा नहीं जा सकता है। युंग ने भी इस आलोचना को स्वीकार किया है और कहा है कि आद्यरूप से सम्बन्धित कथन तार्किक रूप से दुरुस्त कम लगता है।

(3) युंग की आलोचना इसलिए भी की गयी है क्योंकि इन्होंने सैद्धान्तिक पहलू की पूर्ण उपेक्षा की है और अपने विचारधाराओं को तुलनात्मक विधि पर आधारित किया जो उनके लिए मात्र एक वैज्ञानिक विधि है।

(4) यह भी कहा गया है कि युंग का लेखन अस्पष्ट, परस्पर विरोधी तथा अक्रमबद्ध है। अपनी जिन्दगी के उत्तर भाग के लेखनों से यह स्पष्ट होता है कि वे मनोवैज्ञानिक क्रम तथा तत्व मीमांसक अधिक थे।

इन आलोचनाओं के बावजूद युंग का प्रभाव न केवल मनोविज्ञान तथा मनश्चिकित्सा पर ही बल्कि इतिहास, कला, साहित्य एवं संगीत पर भी काफी पड़ा। सचमुच में आधुनिक मनोविज्ञान में युंग द्वारा दिखलायी गई मौलिकता तथा सर्जनात्मकता के समानान्तर कम ही कुछ देखने को मिलता है।

4.9 फ्रायड एवं युंग में अन्तर

फ्रायड के मनोविज्ञान तथा युंग के मनोविज्ञान में कुछ मौलिक अन्तर है जो निम्नांकित है-

(1) फ्रायड के समान, युंग ने मानसिक ऊर्जा के संप्रत्यय को स्वीकार किया। युंग के लिए मानसिक

ऊर्जा की उत्पत्ति विभिन्न शारीरिक प्रक्रियाओं से होती है जो जिन्दगी के लिए एक मौलिक प्रणोद बनता है। स्पष्टत: युंग ने अपने मनोविज्ञान में फ्रायड द्वारा मानसिक ऊर्जा के क्षेत्र में यौन पर दिये गये बल को स्वीकार नहीं किया। फ्रायड के लिए मानसिक उर्जा की उत्पत्ति का स्रोत मूलप्रवृत्ति विशेषकर यौन मूल प्रवृत्ति है।

(2) हालांकि फ्रायड एवं युंग दोनो ने ही अचेतन के संप्रत्यय की व्याख्या की है, फिर भी युंग ने इसकी व्याख्या भिन्न ढंग से की है। युंग ने अचेतन को सामूहिक, प्रजातीय तथा पुरातन माना है। फ्रायड के लिए अचेतन का स्वरूप मूलत: व्यक्तिगत होता है, न कि सामूहिक तथा प्रजातीय।

(3) फ्रायड एक नियतिवादी है जिन्होंने वर्त्तमान व्यवहार का मुख्य निर्धारक गत अनुभूतियों को माना है। जैसा कि हम जानते हैं, एडलर ने इस व्याख्या को अस्वीकृत कर दिया है क्योंकि वे एक सोद्देश्यवादी हैं जो भविष्य को वर्त्तमान व्यवहार का मुख्य निर्धारक मानते हैं। जहाँ तक युंग का प्रश्न है उन्होंने मानव व्यवहार की व्याख्या में नियतिवादी तथा सोद्देश्यवादी दोनों तरह विचारों का समावेश किया है। दूसरे शब्दों में, भविष्य में लक्ष्यों एवं गत अनुभूतियों दोनों को वर्त्तमान व्यवहार का निर्धारक माने हैं।

स्पष्ट हुआ कि युंग तथा फ्रायड के मनोवैज्ञानिक योगदानों में अन्तर है।

4.10 सारांश

(1) मनोविज्ञान एक ऐसा संप्रदाय है जिसका जन्म न तो मनोविज्ञान से हुआ है और न दर्शन से। इसका जन्म चिकित्सा कार्य से हुआ है। मनोविश्लेष्णात्मक मनोविज्ञान की स्थापना का श्रेय सिगमंड फ्रायड को जाता है। उन्हें यह विश्वास होने लगा कि कुछ मनोविकार का कारण शारीरिक न होकर मानसिक होता है। रोगी की संकल्प शक्ति कम हो जाती है तथा उसमें बुरी आदतें पड़ जाती हैं।

(2) फ्रायड द्वारा मनोविश्लेष्णात्मक मनोविज्ञान के तहत किये गये योगदानों को सात भागों में बांटकर अध्ययन किया गया है–(क) स्थानाकृतिक संरचना–चेतन, अर्द्धचेतन तथा अचेतन–फ्रायड ने अचेतन के पहलुओं पर विशेष रूप से जोर डाला है। उन्होंने कहा है कि अचेतन के द्वारा दी मानव व्यवहार निर्धारित होता है। (ख) संरचनात्मक मॉडल–उपाहं, अहं तथा पराहं–उनके अनुसार पराहं व्यक्ति का जैविक पक्ष होता है जिसका वास्तविकता के साथ संबंध नहीं होता है। दूसरा भाग अहं होता है जिसका संबंध जीवन की वास्तविकता के साथ होता है तथा पराहं व्यक्तित्व का मौलिक भंडार होता है। (ग) मानसिक ऊर्जा तथा मूल प्रवृत्ति का सिद्धान्त, (घ) दुश्चिंता तथा प्रतिरक्षा प्रक्रम–उन्होंने दुश्चिंता के कई रक्षा प्रक्रम को बतलाया है–दमन, प्रतिक्रिया निर्माण, प्रतिगमन, प्रेक्षपण, यौक्तिकीकरण, उदात्तीकरण, विस्थापन। (ङ) मनोलैंगिक विकास की अवस्थाएँ–फ्रायड के अनुसार इसकी पाँच अवस्थाएँ हैं–मुखा अवस्था, गुदा अवस्था, लिंग प्रधान अवस्था, अव्यक्तावस्था, तथा जननेन्द्रियावस्था, (च) फ्रायड का समान मनोविज्ञान, (छ) मन शरीर।

इनके सिद्धान्तों की आलोचना मनोवैज्ञानिकों ने की है जो अग्रलिखित है–आंकड़ों का जाँचनीय न होना, असत्यापित सैद्धान्तिक संप्रत्यय, कल्पित संप्रत्यय, परिमापण की कमी, मध्यवर्त्ती चर, यौन पर अत्यधिक बल देना इत्यादि।

इन आलोचनाओं के बावजूद आज के मनोवैज्ञानिक खासकर नैदानिक मनोविज्ञान तथा व्यक्ति के मनोविज्ञान के मनोवैज्ञानिक उनके योगदानों के प्रति काफी आभारित हैं।

(4) एडलर तथा युंग का फ्रायड के साथ कुछ बिन्दुओं पर मतभेद हो जाने के कारण एडलर ने व्यक्तिक मनोविज्ञान नामक सम्प्रदाय की स्थापना की तथा युंग ने अपने संप्रदाय का नाम विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान रखा।

(5) एडलर के योगदानों को सात भागों में बांटकर अध्ययन किया गया है। 1. आंगिक हीनता तथा

क्षतिपूर्त्ति, 2. सफलता तथा श्रेष्ठता का भाव, 3. सामाजिक अभिरुचि, 4. जीवनशैली-इसके अन्तर्गत उन्होंने चार प्रकार की जीवनशैली बतलायी हैं–अधिकार दिखलाने वाले प्रकार, प्राप्त करने वाले प्रकार, दूर हट जाने वाले प्रकार, सामाजिक रूप से उपयोगी प्रकार 5. सर्जनात्मक शक्ति, 6. कल्पित सोद्देश्यता तथा 7. जन्म क्रम।

उपर्युक्त योगदानों के विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि मानव व्यवहार के निर्धारक के रूप में एडलर ने सामाजिक महत्व को स्वीकार किया है।

(6) व्यक्ति मनोविज्ञान के बहुत सारे ऐसे पद हैं जिसकी सक्रियात्मक परिभाषा दिया जाना संभव नहीं है–जीवनशैली, सामाजिक अभिरुचि, श्रेष्ठता का प्रयास तथा सर्वजनात्मक शक्ति आदि। जन्म क्रम के प्रत्यय को वैज्ञानिक रूप में अध्ययन करना संभव नहीं है।

(7) फ्रायड तथा एडलर के विचारों में काफी अन्तर है–फ्रायड ने मनुष्य के जैविक स्वरूप पर अधिक बल डाला है जबकि एडलर ने मनुष्य के सामाजिक स्वरूप पर अधिक बल डाला है। फ्रायड ने यौन संबंधित क्रियाओं पर जरूरत से ज्यादा बल डाला है जबकि एडलर ने आरंभिक लेखन में आक्रामकता तथा शक्ति के प्रयास पर अधिक बल डाला है, फ्रायड ने अचेतन पर अधिक जोर दिया है जबकि एडलर ने मन के चेतन पहलुओं पर अधिक बल दिया है।

(8) युंग ने विश्लेषणात्मक सिद्धान्त के फ्रायड के कई संप्रत्ययों को स्वीकार किये परन्तु कई संप्रत्ययों को अस्वीकार कर दिये कि इससे सेक्स पर जरूरत से ज्यादा बल डाला गया है। युंग के योगदानों को प्रमुख चार भागों में विभक्त कर अध्ययन किया गया है–चेतन एवं अचेतन, मनोवृत्ति एवं कार्य–युंग का मनोवैज्ञानिक प्रकार, मानसिक ऊर्जा तथा व्यक्तित्व विकास। युंग ने फ्रायड की तरह व्यक्तिगत अचेतन के साथ-साथ सामूहिक अचेतन के प्रभाव को माना है। युंग ने फ्रायड के सिद्धान्त को कुछ पदों को छोड़कर स्वीकार किया है साथ ही साथ कुछ और पदों को जोड़ दिया है जिससे युंग का सिद्धान्त काफी महत्वपूर्ण हो गया है।

(9) युंग का योगदान मनोविज्ञान में काफी महत्वपूर्ण है फिर उनके सिद्धान्त की आलोचना हुई है–आलोचकों का कहना है कि सामूहिक अचेतन का कोई शोध मूल्य नहीं है। युंग ने कुछ आत्मनिष्ठ पदों की चर्चा की है जो सिर्फ व्यक्तिक अनुभूति के रूप में की जा सकती है जिसे सबूतों पर परखा नहीं जा सकता है। उनके सिद्धान्तों में सैद्धान्तिक पहलू की पूर्ण उपेक्षा हुई है।

(10) इन आलोचनाओं के बावजूद युंग का प्रभाव न केवल मनोविज्ञान तथा मनोचिकित्सा पर बल्कि इतिहास, कला, साहित्य एवं संगीत पर भी पड़ा है।

(11) फ्रायड तथा युंग के सिद्धान्तों में कुछ अन्तर है–युंग ने अपने मनोविज्ञान में फ्रायड द्वारा मानसिक ऊर्जा के क्षेत्र में सेक्स पर दिये गये बल को स्वीकार नहीं किया है। युंग ने अचेतन को सामूहिक, प्रजातीय तथा पुरातन माना है जबकि फ्रायड ने अचेतन को सिर्फ व्यक्तिक माना है।

4.11 पाठ में प्रयुक्त कुछ प्रमुख शब्द

मनोविश्लेषण, सम्प्रदाय, मनश्चिकित्सा, बौद्धिकता, मनोविकार, तंत्रिका, क्रमबद्धता, संप्रत्ययों, अर्द्धचेतन, स्थलाकृतिक, प्रात्य-स्मृति, उपाहं, विकासात्मक, आदर्शवादी, दुश्चिंता, कामुकता, अव्यक्तितावस्था, विस्थापन, परिमापन अन्त:क्रियावाद, अभिरुचि, श्रेष्ठता, पुरुषोचित, अन्तर्मुखी, अन्तर्ज्ञान, अतंर्मुखता संवेदन, तुल्यता, प्रजातीय, संप्रत्यय।

4.12 अभ्यास के लिए प्रश्न

4.12.1 लघु उत्तरीय प्रश्न

1. **मनोविश्लेषण से आप क्या समझते हैं ?**

   उत्तर–देखें 4.1

2. **मनोविश्लषण में फ्रायड के योगदानों का वर्णन करें।**

   उत्तर–देखें 4.2

3. **फ्रायड तथा एडलर के बीच अन्तर को स्पष्ट करें।**

   उत्तर–देखें 4.7

4. **फ्रायड एवं युंग के मतों में अन्तर को स्पष्ट करें।**

   उत्तर–देखें 4.10

4.12.2 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. **युंग के मनोविश्लेषणात्मक मनोविज्ञान का वर्णन करते हुए, उसके गुणों एवं दोषोंका वर्णन करें।**

   उत्तर–देखें 4.8

2. **एडलर के वैयक्तिक मनोविज्ञान का आलोचनात्मक वर्णन करें।**

   उत्तर–देखें 4.6

3. **फ्रायड के विद्रोही एडलर एवं युंग के विचारों को स्पष्ट करें तथा इन दोनों के बीच अन्तर को स्पष्ट करें।**

   उत्तर–देखें 4.4

4. **फ्रायड के मनोलैंगिक विकास के सिद्धान्त की समीक्षा करें।**

   उत्तर–देखें 5.0

4.13 प्रस्तावित पाठ

1. मनोविज्ञानका संक्षिप्त इतिहास : **अर्जीमुरहमान एवं अशरफ जावेद**
2. मनोविज्ञान की पद्धतियाँ एवं सिद्धांत : **शर्मा जे० डी०**
3. मनोविज्ञान का इतिहास : **रामनाथ शर्मा**
4. Contemporary Schools of Psychololgy : **Woodworth and Sheehan**

◆◆◆

नवफ्रायडवाद
Neo Freudians

पाठ-संरचना

5.0 उद्देश्य
5.1 परिचय
5.2 कैरेनेहार्नी का योगदान
5.3 कैरेनहार्नी के योगदान की आलोचना
5.4 इरिक फ्रोम का योगदान
5.5 इरिक फ्रोम के योगदान की आलोचना
5.6 हैरी स्टैक सुल्लीभान की योगदान
5.7 हैरी स्टैक सुल्लीभान के योगदान की आलोचना
5.8 सारांश
5.9 पाठ में प्रयुक्त कुछ प्रमुख शब्द
5.10 अभ्यास के लिए प्रश्न
5.10.1 लघु उत्तरीय प्रश्न
5.10.2 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
5.11 प्रस्तावित पाठ

5.0 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ का उद्देश्य पाठकों को नवफ्रायडवादी एवं उसके योगदानों से परिचय कराना है। यहाँ पर पाठकों को हार्नी, फ्रोम तथा सुल्लीभान जैसे नवफ्रायडवादी के योगदानों से अवगत कराना भी इस पाठ का एक मुख्य उद्देश्य है। मुझे विश्वास है कि पाठक इससे काफी लाभान्वित होंगे। अन्य पाठ की तरह यहाँ भी अन्त में पाठ का सारांश, पाठ में प्रयुक्त शब्द कुंजी, अभ्यास के लिए प्रश्न एवं पाठ के लिए अन्य उपयोगी पाठ्य सामग्री को भी शामिल किया गया है, ताकि पाठक सही तौर पर लाभान्वित हो सकें।

1.4 परिचय

मनोवैज्ञानिकों का एक समूह ऐसा है जो फ्रायड के यहाँ प्रशिक्षित हुए और बाद में विशेषकर फ्रायड की मृत्यु के बाद उनके सिद्धान्तों एवं विचारों का विरोध किया। परन्तु इनके विरोध का स्वरूप एडलर तथा युंग के समान नहीं था जिन्होंने फ्रायड से अपना नाता पूर्णतः तोड़कर नये मनोविज्ञान की स्थापना की थी। ऐसे मनोवैज्ञानिक अपने को फ्रायड के घराने का ही मानते हैं परन्तु फ्रायड के विचारों एवं संप्रत्ययों में काफी विस्तृत संशोधन किया। इन लोगों ने यह स्पष्ट रूप से बतलाया कि फ्रायड ने अपने विचारों में जैविक कारकों को

सामाजिक सांस्कृतिक कारकों की कीमत पर अनावश्यक ढंग से काफी उछाला। इन लोंगों के अनुसार सच्चाई यह है कि मानव व्यवहारों पर सामाजिक सांस्कृतिक कारकों का भी काफी प्रभाव पड़ता है। अतः इसकी व्याख्या में इन लोगों द्वारा इन कारकों के प्रभावों का भी विश्लेषण किया गया। ऐसे लोगों को नवफ्रायडवादी की संज्ञा दी गयी।

नवफ्रायडवादी के रूप में कैरन हार्नी, इरिक फ्रोम तथा सुल्लीभान के योगदानों के बारे में पाठकों को यहाँ बताया जायगा।

5.2 कैरेन हार्नी का योगदान (1775-1952) (Karen Horney's Cotributions)

हार्नी एक जर्मन महिला मनोवैज्ञानिक हैं जिनका दृष्टिकोण मनोविज्ञान के प्रति नया था। फिर भी उनके विचारों में एक परम्परागत मनोविश्लेषात्मक चिन्तन की स्पष्ट झलक मिलती है। मनोविश्लेषण के मूल तत्वों को उन्होंने सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारकों पर बल डालते हुए करने की कोशिश की है। उन्होंने शिश्न ईर्ष्या के सम्प्रत्यय को सबसे पहली बार 1923 में चुनौती दी। फिर भी उन्होंने फ्रायड के योगदानों को पूर्णतः अस्वीकृत नहीं किया और उनको मान्यता प्रदत्त करते हुए अपने विचारों को निम्नांकित शीर्षकों के तहत उपस्थित किये।

5.2.1 मूल दुश्चिंता

हार्नी के मनोविज्ञान में मूल दुश्चिंता के सम्प्रत्यय का काफी महत्व है। इनका मत था कि प्रत्येक सामान्य एवं स्वस्थ व्यक्ति में कुछ सर्जनात्मक एवं धनात्मक अन्तःशक्ति होती है। जब उसे स्नेह एवं प्यार मिलता है, तो वह उन अन्तःशक्त्यिों को दिखाता है और इससे उसमें आत्म-विश्वास विकसित होता है। दूसरी तरफ यदि उसके मौलिक अन्तःशक्ति की अभव्यक्ति नहीं होती है, या उसकी पूर्त्ति नहीं होती है, तो उससे दुश्चिंता की उत्पत्ति होती है। हार्नी का मत है कि मूल दुश्चिंता व्यक्ति में बाल्यावस्था में उस समय विकसित होती है, जब बच्चा अपने को असमर्थ एवं निःसहाय महसूस करता है तथा अगल-बगल के वातावरण को धमकीपूर्ण बनाता है। हार्नी के अनुसार मूल दुश्चिंता के तीन तत्व होते हैं–असमर्थता का भाव, विद्वेष तथा अलगाव। जब बच्चों को घर में वास्तविक प्यार एवं स्नेह नहीं मिलता है, तो उनमें इन तत्वों का विकास हो जाता है। जब माता-पिता से बच्चों को तिरस्कार मिलता है, तो उसमें असमर्थता तथा अलगाव का भाव विकसित होता है। वह इन भावों को दूर करने का बेकार प्रयत्न भी करता है। इसका स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि उसमें विद्वेष विकसित हो जाता है जिसके कारण वह दूसरों के प्रति आशंकित रहता है जो धीरे-धीरे उसे दूसरों के प्रति आक्रमक बना देता है। उसमें दोषभाव भी विकसित हो जाती है जिसका पहले तो वह दमन कर देता है परन्तु बाद में इससे उसमें दुश्चिंता विकसित हो जाती है। इस तरह से हार्नी ने कुल दुश्चिंता विकसित होने का कारण एक ऐसा चालू वातावरण बतलाया है जिसमें माता-पिता एवं बच्चों के सम्बन्ध में सच्चा प्यार एवं स्नेह की कमी होती है।

5.2.2 स्नायुविकृत आवश्यकताएँ तथा स्नायुविकृत प्रवृत्तियाँ

जब व्यक्ति अपनी जिन्दगी की बहुत सारी समस्याओं का समाधान नहीं कर पाता है जिसके कारण उसे बार-बार असफलता ही हाथ लगती है तो उसमें कुछ विशेष आवश्यकताएँ उत्पन्न हो जाती हैं। इन आवश्यकताओं को हार्नी ने स्नायुविकृत आवश्यकता कहा है क्योंकि इनमें कोई संगत समाधान होता नहीं है। ऐसी आवश्यकताएँ सामान्य एवं मनःस्नायुविकृत दोनों ही तरह के लोगों में उत्पन्न होती हैं।

हार्नी ने इस बात पर बल डाला है कि मनःस्नायुविकृति की उत्पत्ति अहं, उपाहं तथा पराहं के बीच संघर्ष से नहीं होती है (जैसा कि फ्रायड ने कहा था) बल्कि व्यक्ति तथा उसके वातावरण के बीच संघर्ष होने से उत्पन्न होती है। इस तरह से हार्नी ने यह भी स्पष्ट किया है कि एक स्नायुविकृत व्यक्ति हमेशा निम्नांकित तीन दिशाओं में से किसी एक दिशा में अवश्य ही अपने आप को ले जाता है–

(1) व्यक्तियों की ओर झुकने की प्रवृत्ति–इस तरह की स्नायुविकृति की प्रवृत्ति में व्यक्ति में अति अनुपालनशीलता का गुण पाया जाता है। व्यक्ति दूसरों का स्नेह, स्वीकृति तथा अनुमोदन प्राप्त करने के लिए उनकी प्रत्येक इच्छा के अनुकूल कार्य करने के लिए तत्पर रहता है।

(2) व्यक्तियों के विरुद्ध होने की प्रवृत्ति–इस तरह की प्रवृति में व्यक्ति में दूसरों के प्रति आक्रमता तथा विद्वेष अधिक मात्रा में पाया जाता है।

(3) व्यक्तियों से दूर हटने की प्रवृत्ति–इस प्रवृत्ति में व्यक्ति दूसरों का सामना नहीं करना चाहता है और उनसे दूर हटने की कोशिश करता है। उसे लोगों से मिलना-जुलना अच्छा नहीं लगता है और वह एकान्त प्रिय हो जाता है।

बोलमैन (1979) के अनुसार इन तीनों तरह की स्नायुविकृत प्रवृत्तियों के पीछे एक उभयनिष्ठ कारक होता है जिसे उन्होंने सामाजिक कुसमायोजन कहा है।

हार्नी का मत था कि तीनों प्रवृत्तियों से अलग-अलग तीन तरह के व्यक्तित्व की उत्पत्ति होती है जिसका वर्णन निम्नांकित है–

(1) फरियादी प्रकार–इस तरह के व्यक्तित्व का सम्बन्ध "व्यक्तियों की ओर झुकने की प्रवृत्ति" से होता है। ऐसे व्यक्ति जरूरतसे जयादा दूसरों पर निर्भर करते हैं और दूसरों के स्नेह एवं अनुमोदन को जरूरत से ज्यादा महत्व देते हैं।

(2) विद्वेषी प्रकार–इस तरह का व्यक्तित्व "व्यक्तियों के विरुद्ध होने की प्रवृत्ति" से सम्बन्धित होता है। ऐसे व्यक्ति आक्रामक, शक्की, समाजविरोधी तथा विद्वेष प्रकृति के होते हैं।

(3) असम्बद्ध प्रकार–इस तरह का व्यक्तित्व व्यक्तियों से "दूर हटने की प्रवृत्ति" से सम्बन्धित होता है। ऐसे व्यक्त्यों में आत्मकेन्द्रिता, एकान्तप्रियता तथा असामाजिकता अधिक होती है।

5.2.3 चिन्ता को कम करने के आरोप

हार्नी का मत था कि मूल दुश्चिंता से प्रत्येक व्यक्ति छुटकारा पाने के लिए कुछ उपायों को अपनाता है। ऐसे उपायों को निम्नांकित दो भागों में बांटा जा सकता है–

(1) आदर्शवादी आत्म-छवि–हार्नी के अनुसार मूल दुश्चिंता को दूर करने के ख्याल से अपने आप के बारे में व्यक्ति एक आदर्शवादी छवि विकसित कर लेता है जिसमें वह अपने आप को सभी तरह के उत्तम गुणों से युक्त मानता है। यह आदर्शवादी छवि प्रायः अवास्तविक एवं अतिरंजित होती है। ऐसी हालत में वातस्तविक आत्मन् तथा आदर्शवादी आत्मन् में काफी अन्तर होता है। आदर्शवादी आत्मन् मांगों को पूरा करने के लिए सामान्यतः एक स्नायुविकृत प्रयास होता है। ऐसा प्रयास बाध्यकर, अविभेदी तथा अतुष्टणीय होता है। अपने आदर्शवादी आत्मन् को समर्थन प्रदान करने के लिए व्यक्ति घमंडी हो जाता है जिसमें वह अपने आप में कुछ ऐसी विशेष शक्ति जैसे–बुद्धि बल या धन प्राप्त कर लेने की बात सोच रखता है जो अन्य किसी में नहीं होता है।

(2) रक्षा प्रक्रम–हार्नी का मत है कि व्यक्ति मूल दुश्चिंता को दूर करने के लिए कुछ रक्षा प्रक्रम का सहारा लेता है। उनके अनुसार ऐसे रक्षा प्रक्रम दो प्रकार के होते हैं–यौक्तिकीकरण तथा बाह्यता। यौक्तिकीकरण एक ऐसा रक्षा प्रक्रम है जिसमें अयुक्ति संगत अभिप्रेरकों एवं इच्छाओं से उत्पन्न मानसिक संषर्घ या तनाव का समाधन उन अभिप्रेरकों एवं इच्छाओंको युक्तिसंगत बनाकर अर्थात् तर्कपूर्ण एवं विवेकपूर्ण व्याख्या कर किया जाता है और मानसिक संघर्ष को दूर करने की कोशिश की जाती है। इस तरह से हार्नी ने यौक्तिकीकरण का प्रयोग फ्रायड के ही अर्थ में किया था। बाह्यता को हार्नी ने प्रक्षेपण के तुल्य माना है जिसमें व्यक्ति अपने व्यवहार या क्रिया की व्याख्या कुछ बाह्य कारकों में दोषारोपण या गुणारोपण करके करता है। प्रायः दोषारोपण में वह अपने से कमजोर तत्वों को ही निशाना बनाता है।

स्पष्ट हुआ कि हार्नी ने सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारकों का बल डालकर यह दिखलाने की कोशिश की है कि मानव व्यवहार न केवल जैविक एवं मूल प्रवृत्तिक कारकों से ही निर्धारित होता है बल्कि पर्यावरणी

कारकों से भी प्रभावित होता है। इस तरह से केलमैन (1971) के अनुसार हार्नी का दृष्टिकोण मूल प्रवृत्तिक न होकर सम्पूर्णतावादी था। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि बच्चा पर्यावरण तथा आनुवंशिकता का प्रतिफल होता है। उन्होंने फ्रायड द्वारा यौन कारकों पर बल को अनुचित ठहराया।

5.3.4 हार्नी के योगदानों की आलोचना :

इन उपलिब्धयों के बावजूद कुछ मनोवैज्ञानिकों ने हार्नी के योगदानों की आलोचना की है जिसमें निम्नांकित बिन्दु महत्वपूर्ण हैं–

(1) लुडिन (1985) ने यह मत जाहिर किया है कि यद्यपि हार्नी ने फ्रायड के योगदानों को कुछ विशेष कारक जोड़कर उन्नत बनाने की कोशिश की है, फिर भी उनकी उपलब्धियाँ एवं योगदान फ्रायड की उपलब्धियों एवं योगदान के सामने काफी अच्छी है।

(2) कुछ मनोवैज्ञानिकों ने हार्नी के दृष्टिकोण को अधूरा एवं आंशिक करार दिया है। इन मनोवैज्ञानिकों का मत है कि हार्नी ने मूलतः दुश्चिंता स्नायुविकृत आवश्यकताएँ तथा स्नायुविकृत प्रवृत्तियों के अध्ययन तक ही अपने आप को सीमित रखा है। यहाँ तक कि उन्होंने सामान्य व्यक्तित्व की भी इन स्नायुविकृति कारकों के आधार पर व्याख्या करने की कोशिश की है जो स्पष्टतः एक अनुचित प्रयास था।

इन आलोचनाओं के बावजूद हार्नी के योगदानों को मनोविज्ञान के इतिहास में प्राथमिकता दी गयी है। उनका "मूल दुश्चिंता" संप्रत्यय सबसे अधिक महत्वपूर्ण रहा है।

5.4 इरिक फ्रोम का योगदान (1900-1980) (Erich Fromm's Contributions)

फ्रोम अपने आप को एक मनोविश्लेषण न मानकर समाज विश्लेषक मानते थे। फलस्वरूप, वे सामाजिक प्रभावों, विशेषकर समाज के साथ व्यक्ति के सम्बन्धों को व्यहवार का महत्वपूर्ण निर्धारक मानते थे। फ्रोम का मत था कि व्यक्ति का समाज के साथ जो सम्बन्ध होता है, वह स्थिर न होकर परिवर्त्तनीय होता है। हाल एवं उनके सहयोगियों (1985) का मत है कि अपने मनोविज्ञान में फ्रोम ने सचमुच में फ्रायड के दृष्टिकोण तथा कार्ल मार्क्स के सामाजिक सिद्धान्तों एवं दर्शनशास्त्र को सुसंयोजित करने का एक सफल प्रयास किया है। फ्रोम के योगदानों को निम्नांकित चार प्रमुख शीर्षकों के तहत बांटकर अध्ययन किया गया है।

5.4.1 स्वतन्त्रता से पलायन

फ्रोम की पहली पुस्तक 1941 में प्रकाशित हुई जिसका नाम "स्केप फ्रॉम फ्रीडम" था। इस पुस्तक में उन्होंने मनुष्य को एक सामाजिक पशु का दर्जा दिया है। इस पुस्तक में उन्होंने यह इजहार किया है कि जैसे-जैसे व्यक्ति अपनी जैविक अनुभूतियों के आधार पर अपने आप को विकसित करता है, उसमें स्वतन्त्रता की भावना प्रबल होती जाती है। लेकिन इस प्रयास से व्यक्ति अपने आप को अधिक अकेला एवं अलग-थलग भी महसूस करने लगता है। आधुनिक समाज में व्यक्ति को कुछ स्वतंत्रता अवश्य प्राप्त हुई है, परन्तु उसके साथ ही साथ असुरक्षा एवं एकान्तप्रियता से पलायन करने का भी गुण विकसित हुआ है। व्यक्ति अपनी इस लाचारी, असुरक्षा एवं एकान्तप्रियता से पलायन करने की भरपूर कोशिश करता है क्योंकि उसके लिए वह असहनीय हो गया है। इस समस्या का समाधान के लिए फ्रोम ने एक ऐसे समाज के निर्माण पर बल डाला है जिसमें सभी व्यक्तियों के लिए समान अवसर हो तथा जिसमें प्रत्येक व्यक्ति का एक-दूसरे के साथ मधुर सम्बन्ध हो।

5.4.2 पलायन की विधियाँ

फ्रोम का मत है कि मनुष्य में अपनी स्वतंत्रता की भावना से जो लाचारी, निःसहायता एवं एकान्तवासिता का भाव उत्पन्न हुआ है उससे छुटकारा पाने के लिए कई विधियों की खोज कर रखी है। ये सारी विधियाँ बहुत

कुछ फ्रायड द्वारा प्रतिपादित रक्षा प्रक्रम के समान ही है। इन विधियों में चार प्रमुख हैं–आत्मपीड़न, परपीड़न, नाशन तथा स्वचलन अनुरूपता। आत्मपीड़न में व्यक्ति अपनी नि:सहायता एवं एकान्तवासिता के भाव को दूसरों पर निर्भरता दिखलाकर दूर करने की कोशिश करता है। परपीड़न में व्यक्ति दूसरों का शोषण करके तथा दूसरों पर जबरन अधिकार जमाकर नि:सहायता एवं एकान्तवासिता के भाव को दूर करने की कोशिश करता है। नाशन में व्यक्ति अपने इर्द-गिर्द के वातावरण में तोड़-फोड़ करके नि:सहायता एवं एकान्तवासिता के भाव को दूर करता है तथा स्वचलन अनुरूपता में व्यक्ति सामाजिक अज्ञानताओं को आँख मूंदकर मानता है। दूसरों द्वारा अपने प्रति की गयी उम्मीदों के अनुरूप व्यवहार करके व्यक्ति नि:सहायता तथा एकान्तवासिता के भाव से अपने आपको दूर कर लेता है।

5.4.3 मूल आवश्यकता

जैसे-जैसे व्यक्ति समाज के साथ अन्त:क्रिया करता है, उसमें कुछ आवश्यकताएँ उत्पन्न होते जाती हैं। फ्रोम के अनसुार ऐसी पाँच आवश्यकताएँ महत्वपूर्ण हैं–संबंधता की आवश्यकता,श्रेष्ठता की आवश्यकता, गहरापन की आवश्यकता, पहचान की आवश्यकता तथा उन्मुखता की आवश्यकता। संबंधता की आवश्यकता में व्यक्ति पारस्परिक आदर एवं बोधगम्यता के माध्यम से दूसरों के साथ उत्तम संबंध विकसित करने की कोशिश करता है। श्रेष्ठता की आवश्यकता से तात्पर्य वैसी आवश्यकता से होता है जिसमें व्यक्ति अपनी पाशविक प्रकृति से ऊपर उठना चाहता है ताकि वह कुछ सर्जनात्मक रूप से अपने बारे में सोच सके। गहरापन की आवश्यकता से तात्पर्य एक ऐसी आवश्यकता से होती है जिसमें व्यक्ति सक्रिय रहना चाहता है ताकि वह अपने आप को एक अर्थपूर्ण प्राणी समझ सके। पहचान की आवश्यकता से तात्पर्य एक ऐसी आवश्यकता से होती है जिसमें व्यक्ति अपने आपको अनोखा बनाने की कोशिश करता है ताकि उसकी विशिष्ट पहचान अन्य व्यक्तियों की तुलना में बनी रही। उन्मुखता की आवश्यकता से तात्पर्य एक ऐसी आवश्यकता से होती है जिसमें व्यक्ति अपने आप एवं दूसरों के प्रति एक ऐसी उन्मुखता विकसित करने की कोशिश करता है जिसमें एक सही एवं वास्तविक छवि उभर सके। फ्रोम ने एक ऐसे समाज के निर्णय पर बल डाला है जिसमें सबों के लिए समानता हो तथा सभी लोग अपने आत्मन् के एक सम्पूर्ण अर्थ को विकसित कर सके। इस तरह के समाज को.फ्रोम ने मानवतावादी सामुदायिक समाजवादिता कहा है।

5.4.4 व्यक्तित्व प्रकार

फ्रोम के अनुसार व्यक्तित्व जन्मजात एवं अर्जित विशेषताओं का योग हैं। उन्होंने चित प्रकृति तथा चरित्र के बीच अन्तर किया है। चितप्रकृति से तात्पर्य अनुक्रिया के ऐसे तरीके से होता है जो जन्मजात, शरीर गठनात्मक एवं अपरिवर्त्तनीय होता है। चरित्र चितप्रकृति से भिन्न होता है तथा विभिन्न तरह के सामाजिक प्रभावों से प्राप्त अनुभवों द्वारा निर्मित होता है। चरित्र सापेक्ष रूप से स्थायी होता है जिसमें दो तरह की प्रक्रियाएँ अर्थात् समाजीकरण तथा एकीकरण महत्वपूर्ण होती हैं। इन दो प्रक्रियाओं को एक साथ मिलाकर "उन्मुखता" कहा जाता है और वे चरित्र का सार तत्व का निर्माण करते हैं। जब व्यक्ति अपने चरित्र को सामाजिक कारकों तथा समाज के विभिन्न पहलुओं के साथ संबंधित करने की सफल कोशिश करता है, तो उससे व्यक्तित्व के विभिन्न प्रकारों की उत्पत्ति होती है। ऐसे व्यक्तित्व प्रकारों में निम्नांकित पाँच महत्वूपर्ण हैं–

(1) ग्रहणशील प्रकार–इस तरह के व्यक्ति हमेशा दूसरों से मदद की उम्मीद रखते हैं। ऐसे व्यक्ति दूसरों से स्नेह, अनुराग, प्यार आदि को पाने की उम्मीद अवश्य रखते हैं परन्तु जब उन्हें दूसरों को स्नेह, अनुराग देने की बारी आती है, तो मौके से मुकर जाते हैं। ऐसे व्यक्ति को जब दूसरों से प्रत्याशित लाभ नहीं होता है, तो वे काफी चिन्तित नजर आते हैं।

(2) जमाखोर प्रकार–ऐसे लोग प्राय: स्वार्थी, क्रमबद्ध तथा पंडिताऊ प्रकृति के होते हैं। इन्हें बाहरी दुनिया धमकी पूर्ण लगती है और जब वे कुछ बचा पाते हैं तथा अपने पास कुछ जमाकर रख लेते हैं, तो वे अपने आप को सुरक्षित महसूस करते हैं।

(3) शोषक प्रकार–ऐसे लोग अपने बल या धूर्तता के आधार पर किसी चीज को हासिल कर लेने में बहादुर होते हैं। इनमें दूसरों के प्रति आक्रमकता कूट-कूटकर भरी रहती है।

(4) बाजारू प्रकार–ऐसे लोग अपनी सफलता इस बात से आँकते हैं कि वे अपने आप को या अपनी सेवा को कितना अधिक-से-अधिक बेच सकते हैं। सचमुच में वे अपने आप को एक ऐसी वस्तु के समान समझते हैं जिसे बाजार में बेचा या खरीदा जा सकता है।

(5) उत्पादक प्रकार–समाज के लिए ऐसे व्यक्ति अधिक वांछनीय होते हैं। फ्रोम का मत है कि ऐसे व्यक्तित्व का विकास उपर्युक्त चारों प्रकार के व्यक्तित्व के मिलने से बनता है परन्तु वे वास्तविक प्यारा, स्नेह, उत्तरदायित्व एवं सर्जनात्मकता से निर्देशित होते हैं। ऐसे व्यक्तियों के मुख्य गुणों में उनके सर्जनात्मक एवं उत्पादक कार्य तथा दूसरों के अध्ययन के प्रति निष्ठा आदि का गुण अधिक होता है।

इस तरह से हम देखते हैं कि फ्रोम व्यक्ति के जीवनकाल में सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारकों पर बल डालकर व्यक्ति के बारे में एक आशावादी तस्वीर पेश करते हैं।

5.5 फ्रोम के योगदानों की आलोचना

इसके बावजूद कुछ लोगों ने फ्रोम के योगदानों की आलोचना की है जिसमें निम्नांकित प्रमुख हैं–

(1) आलोचकों की राय में फ्रोम का विचार बहुत ही ज्यादा आदर्शवादी है, व्यावहारिक कम। फलस्वरूप, यह बहुत ज्यादा अवास्तविक जैसा लगता है। यही कारण है कि इन आलोचकों ने उन्हें मनोवैज्ञानिक कम तथा दार्शनिक अधिक माना है।

(2) कुछ आलोचकों का मत है कि फ्रोम अपने योगदानों के समर्थन में कोई आनुभाविक आंकड़ा प्राप्त करने में असफल रहे हैं। फलस्वरूप, उनके विचारों पर निर्भरता लोगों के मन में कम है।

(3) कुछ आलोचकों का कहना है कि फ्रोम द्वारा बतलाये गए व्यक्तिगत प्रकार वास्तविक न होकर उनकी अपनी निजी कल्पनाओं पर आधारित है। इसका एक सबूत यह है कि वे सभी एक-दूसरे से पूर्णत: स्वतन्त्र नहीं है।

इन आलोचनाओं के बावजूद फ्रोम के योगदानों का अपना विशिष्ट महत्व है। बहुत कम मनोवैज्ञानिकों ने फ्रोम के समान मानव के व्यवहारों एवं व्यक्तित्व के प्रकारों की मौलिक व्याख्या की है। अत: इस ख्याल से फ्रोम के योगदान की महत्ता काफी अधिक है।

5.6 हैरी स्टैक सुल्लीभान का योगदान (1892-1949) (Contributions of Harry Stack Sullivan)

सुल्लीभान शायद एक ऐसे नवफ्रायडवादी हैं जिन्होंने सम्पूर्णत: एक विभिन्न संप्रत्यात्मक सिद्धान्त का वर्णन किया है। सचमुच में उनके विचारों एवं सिद्धान्तों पर अमनोविश्लेषणात्मक स्रोतों का अधिक प्रभाव पड़ा। शायद यही कारण यह है कि उनकी भिन्नता फ्रायड से अधिक है। उन्होंने फ्रायडियन मनोविश्लेषण के बहुत सारे संप्रत्ययों को अनुचित समझकर हटा देने का सफल प्रयास किये। उनमें लिविडो, पराहं, अहं, उपाहं, तथा यौन सिद्धान्त प्रधान हैं। इसके बावजूद उन्होंने अपने मनोविज्ञान से फ्रायडियन मनोविज्ञान के बहुत सारे संप्रत्ययों को शामिल किये और उसे उन्नत बनाया। जैसे, सुल्लीभान ने फ्रायड के गत्यात्मक मनोविज्ञान से बहुत

सारे संप्रत्ययों को लिया। फ्रायड के समान उन्होंने भी व्यक्तित्व विकास में बहुत सारी विशिष्ट अवस्थाओं के महत्व को स्वीकारा। इस अर्थ में तो मनोवैज्ञानिकों ने सुल्लीभान को एक वास्तविक विकासात्मक सिद्धान्तवादी माना है। सुल्लीभान के मनोविज्ञान को मनश्चिकित्सा का अन्तरवैयक्तिक सिद्धान्त कहा जाता है। इसका मत था कि व्यक्ति जन्म से ही वातावरण की विभिन्न वस्तुओं एवं व्यक्तियों के साथ अन्त:क्रिया करता है और उस अन्त:क्रिया से उसके व्यवहार का निर्धारण होता है। मनोविज्ञान के क्षेत्रों में सुल्लीभान के योगदानों को निम्नांकित तीन प्रमुख शीर्षकों के तहत वर्णन किया जा सकता है–

5.6.1 व्यक्तित्व की गतिकी

सुल्लीभान का मत है कि मानव एक ऐसा ऊर्जा तन्त्र है जो आवश्कताओं द्वारा उत्पन्न तनावों को हमेशा कम करने की कोशिश करता है। उन्होंने तनाव को दो भागों में बांटा है–आवश्यकताओं द्वारा उत्पन्न तनाव तथा चिन्ता द्वारा उत्पन्न तनाव आवश्यकताओं से उत्पन्न तनाव से व्यक्ति समाकलनात्मक व्यवहार करता है तथा चिन्ता से उत्पन्न तनाव द्वारा व्यक्ति असमाकलनात्मक व्यवहार करता है। जब व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को तुष्ट नहीं करता है, तो उससे तनाव उत्पन्न होता है। अगर व्यक्ति की आवश्यकताओं की तुष्टि लम्ब समय तक नहीं हो पाती है, तो उससे एक विशेष अवस्था उत्पन्न होती है जिससे भावशून्यता विकसित होती है। सुल्लीभान का मत है कि यदि माँ चिन्तित रहती है, तो उनके बच्चों में भी अपने-अपने आप चिन्ता विकसित हो जाती है। माँ को चिन्तित होने से उनकी आवाज, व्यवहार, चेहरा तनावपूर्ण लगता है जिसे देखकर बच्चे भी वैसी ही भाव भंगिमा बनाना प्रारंभ कर देते हैं और वे चिन्ता के शिकार हो जाते हैं।

सुल्लीभान ने संज्ञान के तीन स्तर की पहचान की है जो इस प्रकार है–प्रोटोटैक्सिक,पाराटैक्सिक, तथा सनटैक्सिक। प्रोटोऔक्किस अनुभूतियों में शिशुओं की प्रारम्भिक अनुभूतियों सम्मिलित होती है। ऐसी अनुभूतियाँ अस्पष्ट, क्षणिक तथा धारणा योग्य नहीं होने के कारण संचारनीय नहीं होती है। अत: प्रोटोटैक्सिक अनुभूतियाँ शिशुओं के संज्ञान की आरम्भिक अनुभूतियाँ होती हैं। पराटैक्सिक अनुभूतियाँ प्राकतार्किक, व्यक्तिगत तथा दूसरों को विकृत ढंग से संचारनीय होती हैं। ऐसी अनुभूतियाँ निश्चित रूप से प्रोटोटैक्सिक अनुभूतियों से अधिक स्पष्ट होती हैं। ऐसे अनुभूतियों का जन्म तो बाल्यावस्था में होता है। परन्तु इनसे बाद की जिन्दगी की अनुभूतियाँ भी प्रभावित होती हैं। सिनटैक्सिक अनुभूतियाँ अधिक सार्थक होती है और ऐसी अनुभूतियों को व्यक्ति हाव-भाव एवं भाषा आदि द्वारा उत्तम ढंग से दूसरों को संचारित करता है।

यद्यपि उपर्युक्त तीनों तरह की अनुभूतियाँ व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन काल में होती पायी जाती हैं परन्तु एक सामान्य व्यक्ति की जिन्दगी मे सिनटैक्सिक अनुभूतियों की प्रबलता अधिक होती है।

5.6.2 व्यक्तित्व का टिकाऊ पहलू

सुल्लीभान ने अपने मनोविज्ञान मे व्यक्तित्व के कई ऐसे पहलुओं पर बल डाला है जो टिकाऊ प्रकृति के होते है।। ऐसे पहलुओं में निम्नांकित तीन प्रमुख हैं–

(1) गत्यात्मकता, (2) मानवीकरण तथा (3) आत्म-तंत्र । इन तीनों का वर्णन निम्नांकित है–

(1) गत्यात्मकता–सुल्लीभान के मनोविज्ञान में गत्यात्मकता एक ऐसा पद है जिसे शीलगुण के तुल्य माना गया है। सुल्लीभान के अनुसार गत्यात्मकता से तात्पर्य एक ऐसे संगत पैटर्न से होता है जो व्यक्ति की पूरी जिन्दगी में दिखाई देता है। उन्होंने गत्यात्मकता को दो भागों में बांटा है–शरीर के विशेष क्षेत्र से सम्बन्धित गत्यात्मकता तथा तनाव से संबंधित गत्यात्मकता। पहली तरह की गत्यात्मकता से व्यक्ति की विशेष शारीरिक आवश्यकताओं जैसे–भूख तथा प्यास की आवश्यकता की तुष्टि होती है। दूसरी तरह की गत्यात्मकता के तीन उप प्रकार बतलाये गये हैं–वियोजक गत्यात्मकता, अलगावी गत्यात्मकता तथा संयोजक गत्यात्मकता।

वियोजक गत्यात्मकता में व्यवहार के ध्वंसात्मक पैटर्न को रखा जाता है। इसमें व्यक्ति की उन प्रवृत्तियों को रखा गया है जो उन्हें यह सोचने के लिए बाध्य करती हैं कि लोग प्रायः बुरी प्रकृति के होते हैं, और इस संसार में रहने लायक स्थान नहीं है। अलगावी गत्यात्मक में कामुकता का गुण होता है जो एक जैविक घटना है और यौनांगों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उत्पन्न तनाव से विकसित होता है। इसमें समलैंगिक तथा विषमलैंगिक व्यवहरात्मक पैटर्न सम्मिलित होते हैं। संयोजक गत्यात्मकता से तात्पर्य वैसे लाभदायक व्यवहार से होता है जैसा कि हम घनिष्टता तथा आत्मतंत्र में पाते हैं। इनमें से आत्म-तंत्र को सुल्लीभान ने सबसे महत्वपूर्ण माना है। अतः हम यहाँ इसकी विशेष चर्चा करेंगे।

आत्म-तंत्र एक ऐसा जटिलतंत्र है जो अन्तरवैयक्तिक सुरक्षा को बरकरार रखते हुए व्यक्ति को दुश्चिंता से बचाता है। इस तरह से सुल्लीभान के अनुसार आत्म-तंत्र एक तरह का चिन्ता विरोधी तंत्र है क्योंकि इसमें वैसी गत्यात्मकता सम्मिलित होती हैं जिनसे दुश्चिंता में कमी आती है। इस तरह के आत्मतंत्र का विकास बच्चों में 1/12 से 3 साल की उम्र में प्रारंभ हो जाता है। हालांकि आत्म तंत्र से दुश्चिंता कम हो जाती है, यह व्यक्ति को संरचनात्मक ढंग से रहने की क्षमता में बाधक भी होता है। कैसे ? जब किसी बच्चे के आत्मतंत्र में अधिक दुश्चिंता की अनुभूति होती है, उसका आत्म तंत्र अतिरंजित हो जाता है और वह व्यक्तित्व से अलग हो जाता है। इस तरह का आत्म तंत्र सचमुच में उसे किसी परिस्थिति के बारे में एक वास्तविक एवं वस्तुनिष्ठ निर्णय लेने से रोकता है। इससे सार्थक एवं सर्जनात्मक ढंग से रहने में एक तरह से बाधा पहुँचती है।

(2) मानवीकरण—व्यक्तित्व का दूसरा टिकाऊ पहलू मानवीकरण है जिससे तात्पर्य अपने या दूसरों के बारे में मन में बनी एक प्रतिमा या छवि से होता है। मानवीकरण की प्रतिमा आवश्यकता तुष्टि या दुश्चिंता की अनुभूतियों से बनी होती है। जब व्यक्ति में संतोषजनक अन्तर वैयक्तिक सम्बन्ध विकसित होता है, इससे उसके मन में धनात्मक प्रतिमा विकसित होती है तथा असंतोषजनक अन्तर वैयक्तिक सम्बन्ध से व्यक्ति में दुश्चिंता तथा ऋणात्मक प्रतिमा विकसित होती है। सुल्लीभान का मत है कि प्रारंभिक बाल्यावस्था में पाँच सरल मानवीकरण विकसित होते है—उत्तम-माँ, बुरी-माँ, बुरा-स्वयं, उत्तम-स्वयं तथा स्वयं-नहीं। जब बच्चे को माँ के साथ की गयी अन्तःक्रियाओं से संतोषजनक एवं पुरस्कृत होने की भावना होती हैं, तो इससे उसमें उत्तम स्वयं का मानवीकरण और जब उसमें अपनी ही अन्तःक्रियाओं से असंतुष्टि, दंडित एवं अपमानित होने की भावना उत्पन्न होती है, तो इससे उसमें बुरा-स्वयं का मानवीकरण विकसित होता है। जब बच्चों में काफी तीव्र चिन्ता एवं दर्दपूर्ण अनुभूतियाँ होती है, तो इससे उसमें स्वयं नहीं का संप्रत्यय विकसित होता है। दर्दपूर्ण अनुभूतियों के कारण आत्मन् की वैसी चीजें ही इन अनुभूतियों से सम्बन्धित होती है, सव्यक्तित्व से अलग हो जाती है। इस तरह से कहा जा सकता है कि स्वयं नहीं का मानवीकरण द्वारा आत्मन् के विच्छेदित पहलू का प्रतिनिधित्व होता है और इसमें खतरनाक संवेग जिसे सुल्लीभान ने अनकैनी कहा है, सम्मिलित होता है।

5.6.3 विकासात्मक अवस्थाएँ

सुल्लीभान ने व्यक्तित्व विकास की सात अवस्थाओं का वर्णन किया है। इनका मत है कि व्यक्तित्व में परिवर्त्तन विकास की किसी भी अवस्था में हो सकता है परन्तु ऐसे परिवर्त्तन एक अवस्था से दूसरी अवस्था के अंतरण में सर्वाधिक होता है। एक बच्चा दूसरों का किस तरह से प्रत्यक्षण करता है और वह दूसरों के प्रति किस तरह की प्रतिक्रिया करता है, इस पर व्यक्तित्व का विकास निर्भर करता है। दूसरे शब्दों में सुल्लीभान के अनुसार अन्तर वैयक्तिक सम्बन्ध धागा की तरह ही महत्वपूर्ण होता है जो व्यक्तित्व विकास की विभिन्न अवस्थाओं को एक सूत्र में बांधता है। उनके द्वारा बतलाये गए व्यक्तित्व विकास की सात अवस्थाएँ निम्नांकित हैं—

(1) शैशवास्था—यह अवस्था जन्म से लेकर लगभग 24 महीने तक का अर्थात् जब वह सुस्पष्ट भाषा का उपयोग प्रारंभ कर देता है, होता है। जन्म के समय शिशु एक पशु के समान होता है तथा माँ से जैसे-जैसे

उसे प्यार एवं स्नेह मिलता है, उसमें मानवीय गुणों का विकास होता जाता है। इस अवस्था में शिशु माँ के बारे में दोहरे मानवीयकरण विकसित कर लेता है। माँ को वह एक उत्तम माँ तथा बुरी माँ के रूप में प्रत्यक्षण करता है। जब शिशु अपनी आवश्यकताओं को माँ से तुष्ट होते पाता है, तो वह माँ को एक "उत्तम माँ" के रूप में और जब माँ के साथ अन्त:क्रिया से उसमें चिन्ता उत्पन्न होती है, तो उसे एक बुरी माँ के रूप में प्रत्यक्षण करता है। इसी अवस्था के दौरान शिशु संज्ञान की प्रोटोटैक्सिक विधि से पाराटैक्सिक विधि की ओर अंतरण करता है।

(2) बाल्यावस्था–यह अवस्था सुस्पष्ट भाषा बोलने से लेकर साथी-संगी की आवश्यकता उत्पन्न (अर्थात् लगभग पाँच वर्ष की उम्र) होने तक की होती है। इस अवस्था में भाषा का विकास हो जाने से शैशवावस्था में विकसित विभिन्न तरह के मानवीकरण या प्रतिमाओं का आपस में विलयन होता है। जैसे-उत्तम माँ तथा बुरी-माँ का मानवीकरण एक साथ मिलकर माँ की प्रतिमा या मानवीकरण की उत्पत्ति करते हैं। इस अवस्था में बच्चे कुछ सांस्कृतिक पैटर्न जैसे खाने की आदत, पेशाब-पैखाना की आदत, यौन-भूमिका की प्रत्याशाएँ आदि को भी सीखते हैं। सुल्लीभान के अनुसार इस अनुसार इस अवस्था में दो तरह के सीखने जिसे नाटकीकरण तथा तल्लीनता कहा जाता है, भी सम्मिलित होता है। नाटकीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें बच्चे माँ या पिता या परिवार के अन्य महत्वपूर्ण सदस्यों की भूमिका की नकल उतारते हैं। तल्लीनता से तात्पर्य एक ऐसे उपाय से होता है जिसके सहारे बच्चे अपने आप को ऐसे कार्यों में जिनके करने से उन्हें पुरस्कार मिलता है, फँसा कर रखते हैं ताकि उनमें किसी प्रकार की चिन्ता नहीं विकसित हो सके।

(3) तरुणावस्था–यह अवस्था 5-6 साल की अवस्था से प्रारंभ होकर 8-9 साल की अवस्था जब बच्चे में घनिष्ठ दोस्ती की आवश्यकता उत्पन्न होती है, तक की होती है। इस अवस्था में बच्चे में प्रतिस्पर्द्धा, समझौता तथा सहयोग की भावना विकसित होती है। इस अवस्था में तीन ऋणात्मक विकास भी होते हैं। दूसरे शब्दों में, इस अवस्था में बच्चों में रूढ़िकृति, बहिष्कार तथा अवज्ञा का शीलगुण भी विकसित हो जाता है। रूढ़िकृति से तात्पर्य एक ऐसे मानवीकरण से होता है जो माता-पिता द्वारा बच्चों के मन में बैठा दिये जाते हैं। जैसे–भगवान के सामने जाने पर हाथ जोड़ना एक ऐसी ही रूढ़िकृति का उदाहरण है। बहिष्कार से तात्पर्य एक ऐसे अलगाव से होता है जो बच्चों को तब अनुभव होता है जब वह कोई बाह्य समूह का सदस्य होता है। अवज्ञा में बच्चे दूसरे लोगों से, विशेषकर उन व्यक्तियों से, जिन्हें माता-पिता निन्दा करते हैं या नापंसद करते हैं, घृणा करना सीख जाता है।

(4) प्राक् किशोरावस्था–इस अवस्था की शुरुआत घनिष्ठता की आवश्यकता से प्रारम्भ होकर यौवनारंभ तक की होती है। इस अवस्था में बच्चे अपने ही यौन के किसी एक व्यक्ति से अधिक घनिष्ठ दोस्ती कर लेते हैं। इसमें दोस्ती का आधार स्नेह एवं घनिष्ठता होती है। इस अवस्था में अपने ही यौन के व्यक्ति के साथ इस तरह के घनिष्ठ सम्बन्ध को सुल्लीभान ने "सखा" की संज्ञा दी है। सुल्लीभान का मत है कि बिना "सखा" के इस अवस्था में बच्चों में एक तीव्र अलगाव एवं एकान्तवासी होने का भाव विकसित होता है जिससे अन्ततोगत्वा, उसमें दुश्चिता विकसित होती है जो उनके आगे के विकास के लिए हानिकारक होती हैं।

(5) आरंभिक किशोरावस्था–यह अवस्था यौवनारंभ से प्रारंभ होकर उस समय तक की होती है जब उसमें विपरीत लिंग के व्यक्ति के साथ स्नेह या प्यार करने की आवश्यकता उत्पन्न नहीं हो जाती है। इस अवस्था में किशोरों में जननांगी अभिरुचि विकसित हो जाती है और वह कामुक सम्बन्ध कायम करने के लिए तत्पर हो जाता है। इस अवस्था में तीन तरह की मौलिक आवश्यकताओं से सम्बन्धित समस्याएँ प्रधान होती हैं–सुरक्षा, विपरीत लिंग के व्यक्तियों के साथ घनिष्ठता तथा लैंगिक तुष्टि। सुल्लीभान का मत है कि किशोरों में ये तीनों तरह की आवश्यकताएँ आपस में टकराती हैं जिससे विभिन्न तरह का तनाव उनमें उत्पन्न हो जाता है। सुल्लीभान ने इस अवस्था को जिन्दगी में एक महत्वपूर्ण मोड़ माना है क्योंकि यदि इस तनाव से उत्पन्न समस्या को वे ठीक ढंग से समाधान कर लेते हैं, तो इसमें उनमें स्थिरता आती है और यदि वे उनका सफल

ढंग से समाधान नहीं करते हैं, तो इससे उनमें अन्तरवैयक्तिक कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जाती हैं और भविष्य की जिन्दगी दु:खमय हो जाती है।

(6) उत्तर किशोरावस्था–इस अवस्था में शुरूआत जननांगी क्रियाओं के स्थिरीकरण से प्रारम्भ होकर वयस्कावस्था में स्थायी प्रेम सम्बन्ध करने तक की होती है। इस अवस्था में संज्ञान की सिनटैक्सिक तरीका प्रबल होता है। इस अवस्था का सबसे प्रमुख गुण कामुकता तथा घनिष्ठता का विलयन है। इस अवस्था में अन्तिम परिणाम आत्म-सम्मान है जिसके आधार पर व्यक्ति फिर दूसरों को स्नेह एवं प्यार देना सीख लेता है।

(7) परिपक्वता–सुल्लीभान ने इस अवस्था के बारे में कुछ खास नहीं कहा है क्योंकि उनकी नजर में सच्चे अर्थ में परिपक्वता विकसित होने की कोई स्पष्ट अवस्था या उम्र नहीं होती है। उनका मत था कि प्रत्येक गत अवस्था की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि की अन्तिम अभिव्यक्ति एक परिपक्व व्यक्तित्व के रूप में होती है। सुल्लीभान ने एक परिपक्व व्यक्तित्व की कई विशेषताओं का वर्णन किया है। जैसे–एक परिपक्व व्यक्ति अपनी सीमाओं की स्पष्ट पहचान करता है। अपनी अभिरुचि को समझता है, अपनी चिन्ताओं की पहचान करता है तथा वह समझ-बूझकर लोगों से सम्बन्ध स्थापित करता है।

5.7 सुल्लीभान के योगदानों की आलोचना

सुल्लीभान के योगदानों को आलोचकों ने अछूता नहीं छोड़ा है। प्रमुख आलोचनाएँ कुछ इस प्रकार हैं–

(1) आलोचकों का मत है कि सुल्लीभान ने अपने तंत्र में कुछ काल्पनिक संरचनाओं को जरूरत से ज्यादा महत्व दिया है। इनमें मानवीकरण, आत्म-तंत्र आदि प्रमुख हैं। इन काल्पनिक संरचनाओं का चूँकि प्रयोगात्मक सत्यापन कठिन है, अत: इसपर वैज्ञानिक निर्भरता नहीं दिखलायी जा सकती है।

(2) कुछ आलोचकों का मत है कि सुल्लीभान ने व्यक्तित्व के बारे में जो विचार व्यक्त किये हैं, वे पूर्णत: उनके नैदानिक प्रेक्षणों पर आधारित हैं। चूँकि उनके इन प्रेक्षणों में सामान्य व्यक्तियों को नहीं के बराबर सम्मिलित किया गया है, अत: उनके व्यक्तित्व विकास के सिद्धान्त को सामान्य व्यक्तियों पर लागू करना सम्भव नहीं है।

इन आलोचनाओं के बावजूद सुल्लीभान मनोविज्ञान का महत्व काफी अधिक है। उनके मनोविज्ञान का आधार अन्तरवैयक्तिक सम्बन्ध है जिनसे उसके मनोविज्ञान की एक अलग अपनी पहचान तथा विशिष्टता बनी हुई है।

5.8 सारांश

(1) नवफ्रायडवादी ने फ्रायड घराने में रहकर ही फ्रायड के विचारों एवं सिद्धान्तों का विरोध किया। नवफ्रायडवादी में मुख्यत: हार्नी, फ्रोम, सुल्लीभान तथा इरिक्सन को माना जाता है। इन लोगों ने फ्रायड के जैविक कारकों की जगह सामाजिक सांस्कृतिक कारकों के महत्व पर बल दिया।

(2) कैरेन हार्नी एक जर्मन महिला मनोवैज्ञानिक है जो फ्रायड के शिश्न ईर्ष्या के संप्रत्यय को चुनौती दी। इनके अनुसार प्रत्येक सामान्य व्यक्ति में कुछ सर्जनात्मक एवं धनात्मक अन्त:शक्ति होती है। यदि उन्हें स्नेह प्यार मिलता है तो वे अपने अन्त:शक्ति को देखता है, एवं उसमें आत्मविश्वास पैदा होता है, अन्यथा दुश्चिंता की स्थिति पैदा होती है। हार्नी का दूसरा विरोधी विचार स्नायुविकृत आवश्यकताएँ तथा स्नायुविकृत प्रवृत्तियों से संबंधित है। हार्नी का मानना है कि मन:स्नायुविकृति की उत्पत्ति अहं, उपाहं तथा पराहं के बीच संघर्ष से न होकर व्यक्ति तथा उनके वातावरण के बीच के संघर्ष के कारण होता है। हार्नी का विचार है कि एक स्नायुविकृत

व्यक्ति में निम्न में से किसी एक की ओर झुकता है (1) या तो उनमें अन्य व्यक्ति की ओर झुकने की प्रवृत्ति होती है, या उसके विरुद्ध या उससे दूर होने की प्रवृत्ति रखता है। इन तीनों प्रवृत्तियों से व्यक्तित्व के फरियादी प्रकार विद्वेषी प्रकार, तथा असम्बद्ध प्रकार उत्पन्न होते हैं।

हार्नी का तीसरा विचार चिन्ता को कम करने के उपाय से संबंधित है। ये उपाय हैं आदर्शवादी आत्मछवि विधि तथा रक्षा प्रक्रम।

हार्नी के योगदान पर कुठाराघात करते हुए लुडिन ने बताया है कि फ्रायड के योगदान के आगे इनका योगदान तुच्छ, अधूरा एवं आंशिक है।

(3) नवफ्रायडवादी के रूप में इरिक फ्रोम का योगदान भी काफी महत्त्वपूर्ण है। फ्रोम अपने आप को समाज विश्लेषक मानते हैं। फ्रोम के योगदानों को चार शीर्षों में बांटा जा सकता है जिन्हें स्वतंत्रता से पलायन, पलायन की विधियाँ, मूल आवश्यकताएँ तथा व्यक्तित्व के प्रकार में विभाजित किया जा सकता है।

फ्रोम का मानना है कि मनुष्य एक सामाजिक पशु है। जैसे-जैसे यह अपनी जैविक अनुभूतियों के आधार पर अपने आप को विकसित करता है, उनमें स्वतंत्रता की भावना प्रबल होती जाती है, लेकिन साथ ही साथ वह अपने आप को अलग-अलग भी महसूस करने लगता है जिससे असुरक्षित महसूस कर वह स्वतंत्रता से पलायन करता है। अतः फ्रोम का मानना है कि इस खतरे से बचने के लिए लोकतांत्रिक समाज का विकास हो।

फ्रोम के विचार का दूसरा पहलू पलायन की विधियों से संबंधित है जो फ्रायड के रक्षा प्रक्रम की तरह ही है। ये हैं—आत्मपीड़न, परपीड़न, नाशन तथा स्वचलन अनुरूपता। आत्मपीड़न में व्यक्ति अपने अकेलेपन के भाव को दूसरों पर निर्भरता दिखाकर दूर करने की कोशिश करता है। जबकि इसी भाव को परपीड़न में दुसरे का शोषण करके दूर करने की चेष्टा करता है। नाशन में व्यक्ति अपने इर्द-गिर्द के वातवरण में तोड़-फोड़ करके तथा स्वचलन अनुरूपता में व्यक्ति सामाजिक आज्ञाओं को आँख मूंदकर मान लेता है तथा अपने अकेलेपन के भाव को दूर करना चाहता है।

फ्रोम ने व्यक्ति की मूल आवश्यकताओं को भी महत्व दिया है। उनका मानना है कि व्यक्ति जब समाज के साथ अन्तःक्रिया करता है तो उनमें संबंधता की आवश्यकता, श्रेष्ठता की आवश्यकता, गहरापन की आवश्यकता, पहचान की आवश्यकता तथा उन्मुखता की आवश्यकता उत्पन्न होती है। संबंधता की आवश्यकता में व्यक्ति आदर के माध्यम से दूसरों के साथ अच्छा संबंध विकसित करना चाहता है। श्रेष्ठता की आवश्यकता के आधार पर व्यक्ति अपनी पशु प्रवृत्ति से ऊपर उठना चाहता है। गहरापन की आवश्यकता के कारण व्यक्ति सक्रिय रहना चाहता है। पहचान के आवश्यकता के कारण व्यक्ति अपने आपको अनोखा बनाना चाहता है तथा उन्मुखता की आवश्यकता के कारण व्यक्ति अपनी अच्छी छवि बनाना चाहता है।

फ्रोम के अनुसार व्यक्तित्व जन्मजात एवं अर्जित विशेषताओं का योग है। फ्रोम ने व्यक्तित्व के ग्रहणशील, जमाखोर, शोषक, बिकाऊ तथा उत्पादक प्रकारों के महत्व को माना है। ग्रहणशील प्रकार के लोग हर समय दूसरे की मदद चाहते हैं। जमाखोर प्रकार के लोग स्वार्थी तथा पंडिताऊ होते हैं। शीर्षक प्रकार के लोग शोषण में माहिर होते हैं। बाजारू प्रकार के लोग अपने आपको बाजार में बेचने में माहिर होते हैं। उत्पादक प्रकार ऊपर के चार प्रकार का मिश्रण है।

फ्रोम के आलोचक का मानना है कि फ्रोम के विचार ज्यादा आदर्शवादी तथा कम व्यावहारिक हैं। फ्रोम के योगदान पर दूसरा आरोप है कि फ्रोम आनुभाविक आँकड़े प्राप्त करने में असफल रहे हैं। कुछ लोगों का आरोप है कि फ्रोम का व्यक्तित्व प्रकार कल्पना पर आधारित है। जो भी हो, फ्रोम के योगदान का एक अपना विशिष्ट महत्व है।